चन्दामामा
माँ - बच्चों का मासिक पत्र
6

Chandamama March '61

Photo by B. Ranganadham

मुन्नी ! बच्चे के लिए दूध ले आ जल्दी !

चन्दामामा
विषय सूची

इनके अलावा मन बहलाने वाली पहेलियाँ, सुन्दर रंगीले चित्र, और भी अनेक प्रकार की विशेषताएँ हैं।

चन्दामामा कार्यालय

पोस्ट बाक्स नं० १६८६

मद्रास–१

लेखकों के लिए

एक सूचना

★

चन्दामामा में बच्चों की कहानियाँ, लेख, कविताएँ वगैरह प्रकाशित होती हैं। सभी रचनाएँ बच्चों के लायक सरल भाषा में होनी चाहिए। सुन्दर और मौलिक कहानियों को प्रधानता दी जाएगी। अगर कोई अपनी अमुद्रित रचनाएँ वापस मँगाना चाहें तो उन्हें अपने लेख के साथ पूरा पता लिखा हुआ लिफ़ाफ़ा स्टांप लगा कर भेजना होगा। नहीं तो किसी हालत में लेख लौटाए नहीं जा सकते। पत्र-व्यवहार करने से कोई लाभ न होगा। अनावश्यक पत्र-व्यवहार करने से समय की क्षति होती है और हमारे आवश्यक कार्य-कलाप में बाधा पहुँचती है। कुछ लोग रचनाएँ भेज कर तुरंत पत्रों पर पत्र लिखने लगते हैं। उतावली करने से कोई फ़ायदा नहीं। आशा है, हमारे लेखक इन बातों को ध्यान में रख कर हमारी सहायता करेंगे।

★

–: कार्यालय :–

३७, आचारप्पन स्ट्रीट, मद्रास—१.

भारतवर्ष के सभी हिन्दी भाषा-भाषियों के लिए

स्वतन्त्र रोचक पत्र तथा विज्ञापन का प्रमुख साधन

एक प्रति =)　　　　वार्षिक मूल्य ६)

१३, हमाम स्ट्रीट, फोर्ट – बम्बई,

अन्य जानकारी के लिए विज्ञापन व्यवस्थापक को लिखें।

पुष्पा

(अंग्रेजी)

बच्चों का अपना मासिक पत्र।

*

बालकन-जी-बारी

अखिल हिंद-बालक-संघ के द्वारा प्रकाशित।

शिक्षा और मनोरंजन के लिए पुष्पा के ग्राहक बन जाइए।

वार्षिक चन्दा ३)

*

कार्यालय:

"गुलिस्तान"

खार, बंबई, २१.

चार भाषाओं में चन्दामामा

माँ-बच्चों के लिए एक सचित्र मासिक पत्र

मीठी कहानियाँ, मनोरंजक व्यंग्य-चित्र, सुन्दर कविताएँ, पहेलियाँ और तरह तरह के लेख ।

हिन्दी

तेलुगू

तमिल

कन्नड

भाषाओं में प्रकाशित होता है ।

एक प्रति का दाम ।=)

एक साल का चन्दा ४॥)

दो साल का चन्दा ८)

अगर आप चाहते हैं कि चन्दामामा आप को हर महीने नियम से मिलता रहे तो चन्दामामा के ग्राहक बन जाइए ।

★

चन्दामामा पब्लिकेशन्स

पो. बा. १६८६ :: मद्रास-१.

चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र

संचालक : चक्रपाणी

वर्ष १ | मार्च १९५० | अङ्क ७

मुख–चित्र

भगवान के प्रभाव से वसुदेव की हथकड़ी-बेड़ियाँ टूट गईं। कारागार के द्वार आप ही आप खुल गए। रखवाले बेहोश होकर पड़ रहे। वसुदेव बच्चे को लेकर गोकुल की ओर चल दिए। भादों की अँधेरी रात थी। मूसलधार वर्षा हो रही थी। हाथ को हाथ न सूझता था। लेकिन इससे वसुदेव को कोई दिक्कत न हुई। क्योंकि शेषनाग ने अपने सहस्र फन फैला कर उन पर छाता-सा लगा दिया। उमगती हुई यमुना ने अपनी छाती फाड़ कर उनके पार होने के लिए राह दे दी।

वसुदेव जब बच्चे को लेकर गोकुल में नन्द के घर पहुँचे तो वहाँ सब लोग गाढ़ी नींद में डूबे हुए थे। उन्होंने चुपके से बच्चे को यशोदा की बगल में सुला दिया। फिर उन्होंने यशोदा की बच्ची को उठा लिया और मथुरा लौट आए। उस बच्ची को लाकर उन्होंने देवकी की सेज पर सुला दिया। तुरन्त उनके हाथ-पैर में फिर हथकड़ी-बेड़ियाँ लग गईं। भगवान की लीला तो देखो! यशोदा इतना भी नहीं जान सकी कि उसके बच्चा नहीं, बच्ची पैदा हुई थी। सभी गोकुल-वालों ने समझा कि यशोदा के बच्चा हुआ है। वे फूले न समाए।

सोमू-रामू

सोमू रामू गहरे दोस्त
वे थे सदा विचरते मस्त।
साथ स्कूल को जाते थे;
साथ साथ घर आते थे।

साथ साथ वे पढ़ते थे;
और पेड़ पर चढ़ते थे।
खेल अनेक रचाते थे,
ऊधम खूब मचाते थे।

बात एक दिन की, पथ पर
खेल रहे दोनों मिल कर
झगड़ा इक उठ खड़ा हुआ,
बात बात में बड़ा हुआ।

सोमू ने थप्पड़ कस कर
जड़ दिया दोस्त के मुँह पर
रामू ने भी दो घूँसे
लगा दिए बस गुस्से से

खूब मची अब चीख-पुकार;
गूँज उठा सारा बाज़ार।
दोनों के अब्बा आए
दौड़ घरों से झल्लाए।

'वैरागी'

वे दो लगे झगड़ने अब–
'कैसे शुरू हुआ यह सब?'
'है कसूर यह रामू का!'
'नहीं! नहीं! यह सोमू का!'

बात यहीं पर नहीं रुकी;
जीभें उनकी नहीं थकीं।
शुरू हुई हाथा-पाई;
थी उनकी शामत आई।

यों झगड़ते बड़ों को देख
मित्रों को फिर हुआ विवेक।
मन में अचरज करते वे-
क्यों इस तरह झगड़ते थे?

दोनों हाथ मिला कर तब
पिछली याद भुला कर सब
चले गए झट निज निज घर,
बातें करते हँस हँस कर।

इधर बड़ों का यह संग्राम
चला देर तक यों अविराम।
आखिर वे भी शरमा कर
चले गए थक कर निज घर

एक समय एक राजा रहता था। उस राजा के कोई लड़का न था। सिर्फ़ एक लड़की थी। उसका नाम था गौरी। गौरी के छुटपन में ही उसकी माँ स्वर्ग सिधार गई थी। इसलिए राजा ने उसे बड़े लाड़-प्यार से पाला। उसे कभी किसी चीज़ की कमी न होने दी। यों ज्यादा प्यार-दुलार पाने से वह लड़की सिर-चढ़ी हो गई। उसकी ज़िद का क्या कहना था! जो चीज़ माँगती थी तुरन्त देनी पड़ती थी। नहीं तो रो-पीट कर सारा महल सिर पर उठा लेती थी। राजा उसकी कोई बात नहीं टाल सकता था। वह राज-काज में भी अपना हाथ अड़ा देती थी। लोग राजा के डर से उसे कुछ नहीं कह सकते थे। लेकिन मन ही मन कुढ़ते—"न जाने, कहाँ की चुड़ैल पैदा हुई है।"

लेकिन गौरी थी बड़ी सुन्दर। वह गुणी भी थी। उसका गाना-बजाना सुन कर सब लोग निहाल हो जाते थे। बुद्धि भी उसकी बड़ी पैनी थी। लोग कहते—"इस सुन्दर और सुगुणी शरीर में जाने, ये कुलच्छन कहाँ से आ गए!"

गौरी सयानी हुई। एक दिन वह महल की छत पर टहल रही थी। अचानक उसकी नज़र एक युवक पर पड़ी जो पास ही नदी में मछलियाँ मार रहा था। युवक देखने में बहुत सुन्दर था। जात का वह एक मछुआ था। गौरी ने उसे बुलाया और मछलियाँ मोल कर उसे मुट्ठी भर अशर्फ़ियाँ दे दीं। युवक नहीं समझ सका कि राजकुमारी उसे इतनी अशर्फ़ियाँ क्यों दे रही है! फिर भी उसने बड़ी नम्रता से उसे प्रणाम किया और खुश होकर घर चला गया। गौरी इसी तरह रोज़ उसे एक मुट्ठी अशर्फ़ियाँ देने लगी। एक दिन अचानक वह उस मछुए से पूछ बैठी—"तुम मुझसे ब्याह करोगे!" राजकुमारी के

राधारमण

मुँह से ऐसी बात सुन कर वह युवक हक्का-बक्का रह गया। पर किसी तरह अपने को सम्हाल कर बोला—"मैं तो मछुआ हूँ। अगर आप के पिता यह बात सुनेंगे तो मेरा सिर उतार लेंगे।" गौरी ने हँसते हुए कहा—"तुम इसकी चिन्ता न करो। पिताजी को मैं राजी कर लूँगी।" वह मछुआ कुछ न कह सका। गौरी ने तुरन्त पिता के पास आकर निधड़क यह बात कह दी। राजा राजी हो गया। शादी का मुहूर्त निश्चय हो गया। खर्च-वर्च के लिए मछुए को राजा ने बहुत रुपया दिया। बड़ी धूम-धाम के साथ बरात आई। कुलाचार के अनुसार शादी हो गई।

राजा के वंश में एक रस्म थी। ब्याह की रात को दुल्हा-दुलहिन एक ही थाली में खाते थे। लेकिन गौरी इसके लिए राजी नहीं हुई। लोगों ने उसे बहुत मनाया। लेकिन उसने किसी की नहीं सुनी। राजा को बड़ा गुस्सा आया। उसने बहुत जोर डाला। गौरी चिल्ला उठी—"यह कभी नहीं हो सकता। मैं मछुए की जूठन कभी नहीं खा सकती।" यह सुनते ही मानों उन पर बिजली टूट पड़ी। किसी को नहीं मालूम था कि दुल्हा मछुआ है। लोग आपस में काना-फूसी करने लगे। रनवास की औरतों ने दाँतों तले उँगली दबाई। सब लोग कनखियों से दुल्हे की तरफ देखने लगे। उस बेचारे को तो मानों सारे बदन में सैकड़ों बिच्छू डङ्क मारने लगे। वह चुपचाप उठा और दबे-पाँव भाग खड़ा हुआ। यह सब गड़बड़ी देख कर गौरी का धीरज छूट गया। वह एक नादान लड़की की तरह रोने लग गई। अब उसकी समझ में आ गया कि यह सब उसकी जिद और घमण्ड के कारण ही हुआ। इस हलचल में किसी ने नहीं देखा कि दुल्हा कहाँ गया।

गौरी यह अपमान न सह सकी। वह रातों-रात राजमहल छोड़ कर अपने पति को ढूँढ़ने निकल गई। भूखी-प्यासी, विपदा की मारी, वह गाँव-गाँव भटकने लगी। आखिर एक गाँव में उसका पति मिला। अब वह बिल्कुल घबरा गया था। उसने गौरी को पहचाना; लेकिन उससे बिना बोले ही मुँह मोड़ कर चला गया। गौरी बेचारी क्या करती! वह भी उसके पीछे-पीछे चल पड़ी।

आखिर उसे पता लगा कि उसका पति एक अस्तबल में साईस का काम करता है। गौरी ने अस्तबल के मालिक से जाकर कहा—"आपके यहाँ जो साईस है, वह मेरा पति है। वह मुझसे रूठ गया है; इसलिए वह मुझसे बातें नहीं करता है। आप जरा उसे समझा दीजिए।" यह सुन कर वह आदमी ठठा कर हँसा और बोला—"वाह! तुमने तो अच्छी कहानी गढ़ी! वह तो जन्म-जात गूँगा है। फिर तुमसे बातें कैसे करेगा?" यह सुन कर गौरी को क्रोध आया। उसने सोचा—'यह मुझे झूठा बनाना चाहता है।' इसलिए उसने कहा—"वह गूँगा नहीं है। देखना, मैं किस तरह उससे बातें कराती हूँ।" "यह तो कभी नहीं हो सकता।" अस्तबल के मालिक ने कहा। "तो मुझे तीन दिन का समय दो। इस बीच में अगर मैं उससे बातें न करा सकी तो फिर चाहे जो दंड देना।" गौरी ने कहा। "जो बाजी लगा कर हार जाता है, उसके लिए हमारे देश में एक ही सजा है प्राण-दण्ड। मूर्ख लड़की! क्यों नाहक अपनी जान गँवाना चाहती है?" मालिक ने कहा। लेकिन गौरी ने न माना। उसने कहा—"अगर मैं हार गई तो तुम वही दण्ड दे देना।" बाजी लग गई।

पहले दिन गौरी ने अपने पति से बातें कराने की बहुत कोशिश की। लेकिन उसने अपना मुँह न खोला। गौरी ने उसको फटकारा। खरी-खोटी सुनाई। लेकिन वह कुछ न बोला। उसी तरह चुपचाप लौट गया। गौरी रोने लगी।

दूसरे दिन गौरी ने आँखों में आँसू भर कर उसे बहुत मनाया। पुरानी बातें याद दिलाईं। लेकिन वह न पसीजा। तीसरा दिन भी वैसे ही बीतने लगा। गौरी बाजी हारने लगी। उस को प्राण-दण्ड देने की तैयारी हुई।

शीघ्र ही गौरी को प्राण-दण्ड मिलने वाला था। गौरी ने आँसू भरी आँखों से पति की ओर देखा। लेकिन उसका पति पत्थर की तरह खड़ा था। तब गौरी ने सभी दर्शकों को अपनी कहानी रो रो कर सुनाई। लेकिन किसी में दया न पैदा हुई। बेचारी सिसक सिसक कर रोने लगी। उसे अब अपना अपराध मालूम हुआ। दूसरी बार भी उसके घमंड ने उसे धोखा दिया। अब अधिक समय न था। एक-दो मिनट में गौरी को प्राण-दंड दिया जाने वाला था।

इतने में एक आवाज सुनाई पड़ी—"ठहरो! ठहरो! उसे न मारो।" सब ने उस ओर फिर कर देखा। वह आवाज गौरी के पति की थी। अब सब लोग अचरज करने लगे कि गूँगा कैसे बोलने लगा! अब सब को गौरी की बातों पर विश्वास हो गया। सब को खुशी हुई कि आखिर पति-पत्नी में मेल-मिलाप हो गया। गौरी ने अपने पति से क्षमा माँगी। पति ने भी उसे प्रेम से गले लगा लिया। दोनों आनन्द से अपने राज को लौट आए। गौरी का स्वभाव बिलकुल बदल गया। वे दोनों सुख से रहने लगे।

पतङ्ग का परिणाम

['अशोक' बी. ए.]

रोते हुए कहा रामू ने
'मुझे चार पैसे दे माँ!
यदि तू पैसे अभी न दे तो
मुझे मिठाई ले दे माँ!'

माँ से पैसे लेकर रामू
जल्दी से बाज़ार गया।
उसने एक पतंग खरीदी
पक्का तागा मोल लिया।

घर में आकर छत पर जाकर
सुखी हुआ नटखट रामू।
लगा पतंग उड़ाने ऊपर
आँख बचा कर झट रामू।

उड़ने लगी पतंग दूर तक,
हुई आँख से झट ओझल।
फुर्र-फुर्र उड़ना सुन सुनकर
रामू का था मन चंचल।

रामू देख रहा था ऊपर
नीचे का था ध्यान नहीं।
था मुँडेर के पास खड़ा वह
उसे जरा था ज्ञान नहीं।

जब पतंग की डोर खींचने
रामू छत पर जरा फिरा—
फिसला पैर अचानक उसका;
नीचे गेंद-समान गिरा।

रामू के दादा ने जल्दी
अस्पताल में पहुँचाया।
घण्टों कोशिश करने पर भी
होश नहीं उसको आया।

बहुत देर के बाद कहीं तब
रामू ने आँखें खोलीं—
'कहाँ और कैसा हूँ?' इसके
उत्तर में माँ यह बोली—

'तेरे पास खड़ी हूँ बेटा!
मन में जरा न घबराओ!
जल्दी अच्छे हो जाओगे,
तुम मन में हिम्मत लाओ!'

तीन माह के बाद कहीं जा
रामू को आराम हुआ।
तब से रामू ने पतंग को
अपने हाथों नहीं छुआ।

किसी समय 'रणधीर सिंह' नामक एक राजा मणिपुर नामक नगर में राज करता था। उसकी रानी का नाम लक्ष्मी देवी था। उसकी जैसी पतिव्रता स्त्री संसार में कोई नहीं थी। वह रानी थी। उसका पति उसे प्यार करता था। दुनियाँ में उसे किसी चीज़ की कमी न थी। तो भी वह हमेशा उदास रहा करती। कारण यह था कि उसके कोई सन्तान न थी। सन्तान पाने के लिए उसने अनेकों पूजा-पाठ करवाए। सभी देवताओं की मनौतियाँ मानीं। अपने हाथों सदाव्रत बाँटे। निर्धन लड़कियों के ब्याह करवाए। जगह-जगह कुँए और तालाब खुदवाए। सभी तीर्थों की यात्रा कर आई। लेकिन सन्तान न हुई। तब रानी ने अपने मन में सोचा—"राज-पाट और धन-धाम से क्या लाभ है जब मेरी गोद सूनी पड़ी है! रानी बन कर बाँझ होने से तो पत्थर बनना अच्छा था। तब तो मुझे बाँझ की उपाधि न मिलती!"

उस नगर से थोड़ी दूर पर भद्रगिरि नामक एक पहाड़ था। उस पहाड़ पर भद्रदन्त नामक एक मुनि तपस्या में लीन रहा करते थे। इसीलिए उस पहाड़ का नाम भद्रगिरि पड़ गया था। रानी ने सोचा—"मैं जाऊँ उस पहाड़ पर। मुनि के पैरों पड़ कर अपना दुखड़ा सुनाऊँ। शायद उन्हें दया आ जाए और कोई न कोई उपाय बता दें।" उसने अपने मन की बात राजा से कही। राजा ने तुरन्त उसकी इच्छा के अनुसार प्रबन्ध कर दिया। फिर शुभ-मुहूर्त देख कर रानी भद्रगिरि पहाड़ के लिए चल पड़ी। आगे-आगे कुछ घुड़सवार चल रहे थे। रानी की पालकी बीच में थी। उसके पीछे बहुत-सी दासियाँ थीं। रानी की सवारी देखने के लिए शहर के सभी स्त्री-पुरुष, बाल-बच्चे घरों से बाहर निकल आए।

थोड़ी ही देर में रानी पहाड़ के पास जा पहुँची। उसने घुड़सवारों और दासियों को

उनसे ढक-से गए थे और पहचानना मुश्किल था। रानी बड़ी सावधानी से उनके पास पहुँची और प्रणाम किया।

लेकिन मुनि अपने ध्यान में डूबे हुए थे। उन्हें दुनियाँ की कोई खबर न थी। इसलिए न वे हिले, न डुले और न उनकी नज़र ही खुली। रानी चुपचाप खड़ी रही। उनके ध्यान में कोई बाधा न डाली। वह डर रही थी कि कहीं मुनि गुस्सा न हो जाएँ। थोड़ी देर तक सोच विचार कर उनको जगाने के लिए उसने एक उपाय किया। उसने एक हाँडी में

वहीं पहाड़ के नीचे छोड़ दिया। स्वयं तीन दासियों को साथ लेकर वह पहाड़ पर चढ़ने लगी। बेचारी को कभी पैदल चलने का अभ्यास तो था नहीं। इसलिए उसके पैरों में छाले पड़ गए और जल्दी ही उसकी साँस फूलने लगी। लेकिन उसने हिम्मत न हारी और बहुत मुश्किल से वहाँ चढ़ी जहाँ मुनि भद्रदन्त तपस्या कर रहे थे।

मुनि निश्चल समाधि में बैठे थे। उनके चारों ओर लता-बेलें छा गई थीं। उनके बालों में चिड़ियों ने घोंसले बना लिए थे। घास-फूस इस तरह उग आई थी कि मुनि

थोड़ा पानी और चावल मँगाया। फिर उसने दो पत्थर लाकर उन पर हाँडी चढ़ा दी और तीसरे पत्थर के बदले अपना घुटना टिका दिया। तब उसने हाँडी के नीचे आग सुलगा दी।

थोड़ी देर में आग भभक उठी। उसका घुटना जल गया। उसने चीख कर अपना घुटना खींच लिया। हाँडी नीचे लुढ़क गई और चावल ज़मीन पर बिखर गए।

तुरन्त मुनि भद्रदन्त ने आँखें खोल कर कहा—"बेटी! तुम किसी राज-घराने की नारी मालूम होती हो। शायद तुम्हें कभी अपने हाथों रसोई बनाने की आदत नहीं

हो। इसीलिए तुम्हें चूल्हा सुलगाना नहीं आता है। जाओ, और एक पत्थर ले आओ और तीनों पर हाँडी चढ़ाओ। इस तरह तो घुटना ही जल होगी!"

रानी यही चाहती थी। वह मन ही मन खुश हुई और मुनि को फिर दण्डवत करके अपनी राम-कहानी सुनाने लगी। अन्त में आँचल फैला कर, चरणों में माथा टेक कर वह बोली—'मुनिवर! कोई ऐसा उपाय बताने की कृपा कीजिए जिससे मैं सन्तान का मुँह देख सकूँ।'

"लेकिन तुम्हारे भाग्य में सन्तान तो है नहीं।" मुनि ने कुछ सोच कर कहा।

यह सुनते ही रानी मूर्छित हो कर गिर पड़ी। उसकी यह दशा देख कर मुनि को दया आ गई। उन्होंने ध्यान लगा कर देखा तो मालूम हुआ कि रानी के सन्तान तो हो सकती है। लेकिन उसमें माता-पिता की जान का खतरा है। अगर लड़की हुई तो माता के प्राण न बचेंगे और लड़का हुआ तो पिता की जान खतरे में पड़ेगी। यह सब उन्हें साफ़-साफ़ दीख पड़ा। लेकिन उन्होंने रानी से यह सब नहीं बताया। वे बोले—"बेटी! यहाँ से थोड़ी दूर पर उत्तर की

ओर साँपों के राजा नागेन्द्र की बाँबी है। उसके चारों ओर चार बड़े-बड़े साल के पेड़ हैं। उनके बीच में बाँबी है और ठीक बाँबी के ऊपर एक आम का पेड़ है। उस पेड़ में बहुत से आम फले हुए हैं। तुम वहाँ जाकर पहले बाँबी की प्रदक्षिणा करना। फिर उस पेड़ से सात फल तोड़ना। घर जाकर नदी में स्नान कर उन सातों आमों का रस निचोड़ कर पी जाना। अवश्य तुम्हारी कामना पूरी होगी।"

रानी मुनि को प्रणाम करके बड़ी खुशी के साथ वहाँ से चली और सीधे नागेन्द्र की बाँबी के पास पहुँची। चारों ओर चार साल

के पेड़ थे। बीच में बाँबी और बाँबी पर उगा हुआ एक आम का पेड़। पेड़ की डालियाँ फलों से लदी हुई थीं। रानी ने भक्ति-भाव से बाँबी की प्रदक्षिणा की और पेड़ पर चढ़ गई। लेकिन जल्दी में वह मुनि की हिदायत भूल गई और आँचल भर फल तोड़ कर नीचे उतरी। उतरते ही उसे मुनि की बात याद हो आई। घबरा कर उसने गिन कर देखा तो आँचल में सात ही फल निकले। उसे सन्तोष न हुआ। लालच के मारे वह फिर पेड़ पर चढ़ गई और आँचल भर फल तोड़ लाई। लेकिन नीचे उतर कर देखा तो फिर सात-के-सात ही निकले। वह तीसरी बार फिर पेड़ पर चढ़ी और फल तोड़ने लगी।

एकाएक धरती डोल उठी और पेड़ झूलने लगा। रानी के हाथ-पैर ढीले पड़ गए। बाँबी में से बारह फन वाला नागेन्द्र क्रोध से फुफकारता बाहर निकला और आम के पेड़ पर चढ़ने लगा। यह देख कर रानी के प्राण सूख गए।

"कौन हो तुम, जो बिना मेरी इजाज़त के मेरे पेड़ पर चढ़ गई हो और फल तोड़ रही हो! देखो, अब कैसा फल

मिलता है तुमको!" नागेन्द्र सरसराता पेड़ पर चढ़ रहा था।

"हाय रे भगवान! तुमने क्या किया! अभी तो मेरी कामना पूरी नहीं हुई। मैंने जिसके लिए इतना कष्ट उठाया उस सन्तान का मुँह तो देखा ही नहीं! मैं निस्सन्तान ही मरने जा रही हूँ। हे नागेन्द्र! मेरी प्रार्थना सुनो! अपराध का दण्ड तो मुझे दो। लेकिन इतनी कृपा करो कि अभी मुझे छोड़ दो। जब मैं सन्तान का मुँह पहली बार देख लूँगी तब से नौ महीने के बाद शेष-पूनों को आकर मुझे डस लेना। तब तक तो मेरी जान बचा दो।" रानी ने कातर हो कर कहा।

"बहुत अच्छा, तू जा! मैं तेरी बात मान लेता हूँ। तुम्हारे सात लड़कियाँ होंगी। सबसे छोटी लड़की को मेरा नाम रख देना। लेकिन अपना वादा भूलना मत!" नागराज ने कहा।

"हाय! नागराज! तो क्या सभी लड़कियाँ ही होंगी! क्या मेरे भाग्य में लड़का नहीं लिखा है! कम से कम एक लड़का तो दे दो!" रानी ने बड़ी दीनता से कहा।

'लेकिन अगर लड़का हुआ तो तुम्हें अपने सुहाग से हाथ धोना पड़ेगा।' नागेन्द्र ने कहा।

"तब मुझे लड़कियाँ ही दो। मैं सुहागिनी रह कर ही मरूँ। क्या लड़कियों से वंश नहीं चलता!" रानी ने कहा। नागेन्द्र रानी को वादे की याद दिला कर अपने बिल में चला गया। रानी के मन की सारी चिन्ता दूर हो गई। वह खुशी-खुशी नीचे उतर आई और दास-दासियों के साथ नगर को लौट पड़ी।

रानी के लौट आने की खबर सुन कर राजा बड़े आनन्द से अगवानी करने आया। वह उसे बड़ी धूम-धाम के साथ महल में ले गया।

दूसरे दिन रानी ने नहा-धोकर एक सोने की कटोरी में सातों आमों का रस निचोड़ा और मन ही मन मुनि भद्रदत्त और नागेन्द्र का नाम ले कर उसे पी गई। रस पीने के छः घड़ी बाद रानी के गर्भ रह गया। उसका मुँह पीला पड़ गया। सातवीं घड़ी में रानी के प्रसव-पीड़ा आरंभ हुई। अनेकों चतुर दाइयों ने आकर रानी की देख-भाल की।

आठवीं घड़ी में रानी के सात लड़कियाँ पैदा हुईं। राजा ने तुरन्त शहर भर में खुशियाँ मनाने का हुक्म दे दिया।

लड़कियों के जन्म के तीन महीने बाद

राजा ने राज भर में पूजा-पाठ करवाया। पुरोहित ने आकर राजा की सातों लड़कियों का नामकरण किया। बड़ी का गुणवती, दूसरी का रूपवती, तीसरी का भाग्यवती, चौथी का हेमवती, पाँचवी का सुखवती, छठी का बुद्धिवती और सबसे छोटी का नाम नागवती रखा गया।

लड़कियों के चाँद से मुखड़े देखती, हँसती-खेलती रानी दीन-दुनियाँ को भूल गई। बेचारी को बिल्कुल होश न रहा कि दिन बीत चले हैं। एक दिन उसने पुरोहित से पूछा कि शेष-पूनों कब है? पुरोहित ने पत्रा देख कर उत्तर दिया—"आज से तीसरे दिन।"

सुनते ही रानी सिर से पाँव तक काँप उठी। तीन दिन के बाद नागेन्द्र आकर उसके प्राण हर लेगा। फिर उसकी फूल सी कोमल संतान की देख-भाल कौन करेगा? अगर राजा दूसरा ब्याह कर ले? तब तो सौतेली माँ इनके लिए नागिन बन जाएगी। हाय भगवान! इन अनाथ बच्चियों की क्या दशा होगी!

यह सोच कर रानी ने राजा को बुला भेजा और उससे सारी कहानी कह दी। अन्त में यह भी कह दिया कि अब उसकी जिन्दगी के तीन ही दिन बाकी हैं। यह

सुनते ही राजा पर मानों गाज गिरी। मूर्छित हो कर वह वहीं गिर पड़ा।

राजा को इस हालत में देख कर मन्त्रियों ने कहा—"महाराज! आप कुछ चिंता न करें। हम ऐसा उपाय करेंगे कि नागेन्द्र रानी जी का बाल भी बाँका न कर सकेगा।"

फिर मन्त्रियों ने बीच बाजार में दो बहुत ऊँचे खम्भे गड़वाए। एक सोने का सन्दूक बनवा कर उन खम्भों से लटका दिया। उस सन्दूक में रानी लेट गई। उसे चारों तरफ़ से बन्द करके ताला जड़ दिया गया। फिर उन खम्भों के चारों तरफ़ बड़ी गहरी खाइयाँ खोद कर उनमें तेल भर दिया गया और उसमें आग लगा दी गई। शहर के सभी दरवाज़े मजबूती से बन्द कर दिए गए और सैकड़ों हथियार-बन्द सिपाही घूम-घूम कर पहरा देने लगे। सारा शहर सावधान था। सब यही सोच रहे थे—'देखें, अब नागेन्द्र कैसे आता है और रानी को कैसे डसता है!'

शेष-पूनों आई। नागेन्द्र बहुत देर तक रानी की राह देखता रहा। लेकिन जब वह नहीं आई तो उसे बड़ा गुस्सा आया। वह अपने बारहों फन फैला कर फुफकार उठा। फिर सरसराता नगर की तरफ़ चला। दूर से वहाँ की तैयारियाँ देख कर उसके गुस्से का वारपार न रहा। सूक्ष्म-रूप धारण कर वह उड़ा और सीधे रानी के सन्दूक में जा पहुँचा। "अरी विश्वास-घातिनी! तूने सिर्फ़ अपना वादा ही नहीं तोड़ा। उलटे मुझे मरवाने की कोशिश की! बोल—चुप क्यों हो गई!" नागेन्द्र ने जीभ लप-लपा कर कहा।

"नागराज! इसमें मेरा कोई अपराध नहीं। यह सब मेरी इच्छा के विरुद्ध हुआ है। मैं तो अपना वादा पूरा करना ही चाहती थी।" रानी ने साहस बटोर कर कहा। किन्तु उसी समय उसे अपनी उन अबोध बच्चियों की याद आ गई और वह वहीं मूर्छित होकर गिर पड़ी। [सशेष]

बच्चो ! तुम तो जानते ही होगे कि अरब घोड़ों के लिए बहुत मशहूर है। किसी समय अरब के एक गाँव में 'गिजरू' नामक एक आदमी रहता था। वह अपने कबीले का सरदार भी था। गिजरू बड़ा इन्साफ-पसंद आदमी था। किसी के साथ रू-रियायत करना नहीं जानता था। लेकिन दिल उसका बड़ा नरम था।

गिजरू बड़ा दानी भी था। उसके दान-धर्म की शोहरत हर तरफ़ फैली हुई थी। दान करने में वह कभी आगा-पीछा नहीं करता था। उसके मुँह से कभी 'नहीं' न निकलता था। उसके पास अपना कुछ नहीं था। जो कुछ था खुदा का था और वह उसे खैरात कर देता था। उससे खैरात पाने की आशा में दूर-दूर के लोग उसके पास आया करते थे।

गिजरू के घर जब कोई मेहमान आते तो वह खुद उनकी अगवानी करता और आदर के साथ अंदर ले आता। बड़े प्रेम से उनको नहलाता-धुलाता और तरह-तरह के पकवान बनवा कर उन्हें खिलाता-पिलाता। वह उन्हें अपने पलंग पर सुलाता और उन्हें किसी तरह की तकलीफ़ नहीं होने देता। लोग उसकी खातिरदारी से इतने खुश हो जाते कि लौटने पर हर जगह उसी की बड़ाई करते। उससे जलने वाले और लालची लोग भी उसके घर आकर इतने खुश हो जाते कि उनका दिल बदल जाता और वे उसके गहरे दोस्त बन कर वहाँ से जाते।

गिजरू को दुनियाँ में अगर जान से भी प्यारी कोई चीज़ थी तो वह उसका एक घोड़ा था। उस घोड़े का नाम था 'अमराक'। वह उस पर सौ जान से न्योछावर था।

उस समय अरब देश का सुल्तान था इब्राहीम। इब्राहीम बड़ा नेक आदमी था। उसे भी घोड़ों का बहुत शौक था। इसलिए वह दूर-दूर से सुन्दर घोड़े मँगवाता और अपने अस्तबल की रौनक बढ़ाता।

एक दिन उस सुल्तान के कान में किसी ने फूँक दिया—"हुजूर! आपके सभी घोड़ों से गिजरू का घोड़ा 'अमराक' ज्यादा खूबसूरत है।" यह सुन कर सुल्तान ने अपने आदमियों को बुलाया और कहा—"जाओ, ऊँटों पर अशर्फियाँ लाद ले जाओ और गिजरू को मुँह-माँगा दाम दे कर 'अमराक' को खरीद लाओ।"

सुल्तान के आदमियों ने आकर गिजरू से यह बात कही। लेकिन वह राजी न हुआ। तब उन्होंने दाम बढ़ा दिया। फिर भी गिजरू राजी न हुआ। सुल्तान के आदमियों ने सात गुना दाम बढ़ा दिया। लेकिन गिजरू हर बार इनकार करता गया। उसने बड़े विनय के साथ कहा—"अमराक के सिवा आप और कोई भी चीज़ माँगिए, मैं देने को तैयार हूँ।"

आखिर सुल्तान के आदमी हताश होकर लौट आए और सुल्तान से सब बातें कह सुनाईं। तब सुल्तान ने मन में सोचा—"न जाने, वह घोड़ा कितना खूबसूरत है कि गिजरू किसी भी दाम पर देने को तैयार नहीं होता। जरा मैं खुद जाकर देख आऊँ।"

वह भेस बदल कर गिजरू के घर पहुँचा। वहाँ जाकर अमराक को देखा तो उसका दिल काबू से बाहर हो गया। लेकिन वह करता क्या? जब उस गिजरू ने जिसके मुँह से 'नहीं' न निकलता था, इनकार कर दिया तो वह कैसे अमराक को पा सकता था? वह उदास हो अपने महल को लौट आया और इसी फिक्र में बीमार पड़ गया।

धीरे-धीरे सुल्तान की बीमारी बढ़ती गई। आख़िर सुल्तान के लड़के ने वज़ीर को बुला कर कहा—"वज़ीर साहब! किसी तरह अमराक को लाना ही चाहिए। नहीं तो अब्बाजान की जान न बचेगी। बोलिए, आप की क्या राय है?"

वज़ीर ने कहा—"शाहज़ादा साहब! आप घबराइए नहीं। आप तो जानते ही हैं कि गिजरू कैसा दानी आदमी है! उसके मुँह से 'नहीं' कभी नहीं निकलता। फिर उससे यह घोड़ा माँग लेना कौन सी बड़ी बात है! इस बार आप ख़ुद गिजरू के यहाँ जाइए। उसे सुल्तान साहब की बीमारी की बात सुना कर साल भर के लिए घोड़ा माँग लीजिए। कहिए कि एक साल बाद ज़रूर लौटा दूँगा। आप जाइए; इस बार घोड़ा आपको ज़रूर मिलेगा।"

शाहज़ादा कुछ सवार साथ लेकर तुरन्त वहाँ से चला और गिजरू के गाँव जाकर देखा तो मालूम हुआ कि सारा गाँव सूना पड़ा है। वह सोच ही रहा था कि अब क्या किया जाए। इतने में उसे एक गड़रिया दिखाई दिया। उससे पूछने पर उसने

बताया कि सूखा पड़ जाने के कारण गाँव वाले यहाँ से कई कोस की दूरी पर एक झरने के पास जाकर रहने लगे हैं। शाहज़ादा फिर वहाँ से चल कर थोड़ी देर बाद गिजरू के पड़ाव पर आ पहुँचा। गिजरू ने उसे देख कर बड़ी आव-भगत की। थोड़ी देर में सब लोग खाने बैठे। शाहज़ादे ने ऐसा खाना कभी नहीं खाया था।

खाने-पीने के बाद गिजरू ने शाहज़ादे से पूछा—"बताइए! आप यहाँ क्यों तशरीफ़ लाए हैं? मैं आपकी क्या ख़िदमत करूँ?"

तब शाहज़ादे ने शरमाते हुए कहा—'मैं आपसे 'अमराक' को माँगने आया हूँ।'

'क्या! अमराक को!' गिजरू चकित हो गया। उसके मुँह से और कोई बात न निकली।

"हाँ, अमराक ही को" यह कह कर शाहजादे ने सारा किस्सा कह सुनाया और अन्त में यह भी कह दिया कि अमराक के बिना सुल्तान की जान न बचेगी।

यह सुनते ही गिजरू चुपचाप आँसू बहाने लगा।

तब शाहजादे ने पूछा—"क्यों गिजरू! तुम आँसू क्यों बहा रहे हो?"

गिजरू ने आँसू पोंछते हुए जवाब दिया—'इसलिए कि अब आपको देने के लिए अमराक नहीं रहा। आपके आने पर मैं बड़ी फ़िक्र में पड़ गया। क्योंकि आपको खिलाने के लिए घर में गोश्त नहीं था। तब मैंने अपने प्यारे अमराक को मरवा डाला। आपने जो गोश्त खाया है, वह उसी अमराक का था।'

तब शाहजादे ने गिजरू को दिलासा देते हुए कहा—'गिजरू! आज तुम्हारा नाम अमर हो गया। तुमने संसार को दिखा दिया कि मेहमान की खातिरदारी कैसे की जाती है। अमराक तो अब नहीं रहा। लेकिन जब तक दुनियाँ रहेगी तब तक तुम्हारा और अमराक का नाम लोगों की जबान पर होगा।"

शाहजादे ने लौट कर सुल्तान से सब कुछ कह सुनाया। कुछ दिन बाद जब सुल्तान चङ्गा हो गया तो उसने जिस जगह शाहजादे की दावत की गई थी उस जगह अमराक की याद में एक बड़ा भारी पत्थर का घोड़ा बनवा दिया। आज भी घोड़े की उस मूर्ति को देखते ही लोगों को गिजरू का किस्सा याद आ जाता है।
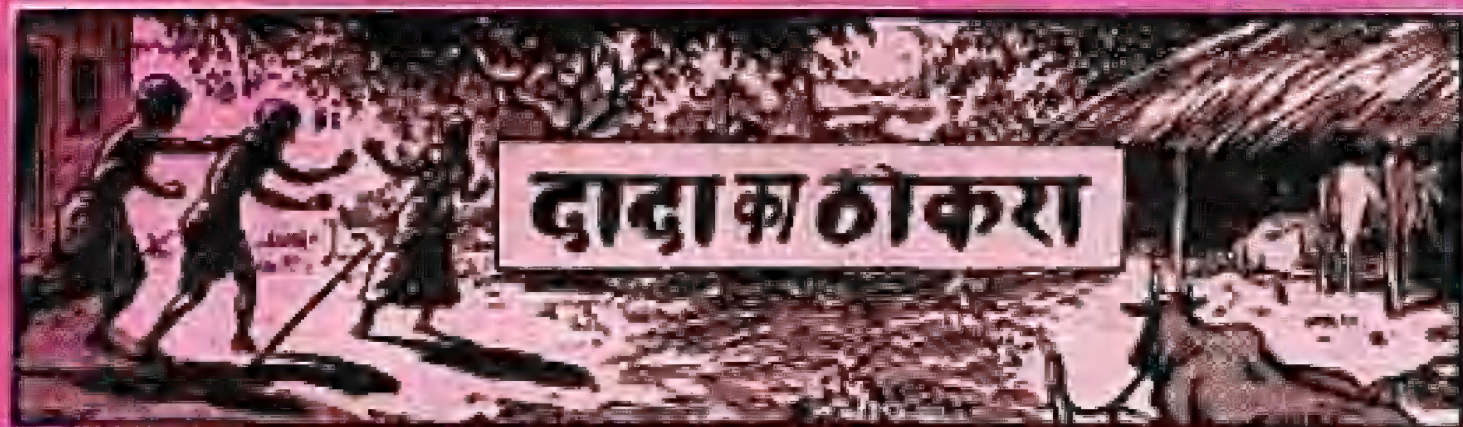
एक गाँव में बिसेसर नाम का एक किसान रहता था। वह बड़ा मेहनती था। सबेरे उठता तो शाम तक कोई न काम करता ही रहता। कभी बेकार नहीं बैठता। इसलिए कुछ ही दिनों में उसकी जायदाद दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ गई। उसने कई सौ बीघे जमीन खरीद ली और रहने के लिए एक महल बनवा लिया।

यह सब तो था। लेकिन उसके कोई बाल-बच्चे न थे। इसलिए वह हमेशा उदास रहा करता था। वह मन ही मन सोचता—'भगवान की कृपा से मुझे खाने-पहनने की कोई कमी नहीं है। दस आदमी मेरे पास माँगने के लिए आते हैं। मुझे किसी के आगे हाथ पसारने की जरूरत नहीं पड़ती। लेकिन इस धन-दौलत से क्या फायदा है जब कि सारा घर ही सूना हो रहा है!' इस तरह वह बहुत चिंता करता।

आखिर बहुत दिनों बाद भगवान शंकर की कृपा से उसके एक लड़का पैदा हुआ। इसलिए उसने उसका नाम कृपा-शंकर रखा। वह जन्म-जात कंजूस निकला। दान-पुण्य उसको फूटी आँखों न सुहाता था। उसके माँ-बाप जब किसी को कुछ देना चाहते तो वह रोक देता। उसके माँ-बाप सोचते कि जब वह बड़ा हो जायगा तो स्वभाव बदल जायगा। तब उस में उतनी कंजूसी नहीं रहेगी। लेकिन वह ज्यों ज्यों बड़ा होता गया उसकी कंजूसी भी बढ़ती गई।

"ऐसे नहीं होगा। अगर उसका ब्याह कर दिया जाय तो बहू आ कर उसको दान-पुण्य करना सिखाएगी। घर की मर्यादा

बहू के ही हाथ में रहती है।" उसके माँ-बाप ने यह सोच कर एक रूपवती कन्या से उसका ब्याह कर दिया। लेकिन यह क्या थी कि उसके माँ-बाप एक बला ही खरीद ले आए। पहले तो उसकी कंजूसी से माँगने वालों को ही दुख पहुँचता था। लेकिन अब उसके माँ-बाप को भी उसका मजा मिलने लगा। क्यों! जानते हो, कृपा-शंकर ने क्या किया? उसने अपने माँ-बाप को घर से निकाल दिया। उनको गोठ की गंदगी में रहने के लिए कहा। टूटी खाटों पर सोने के लिए कहा। पहनने-ओढ़ने के लिए उन्हें गूदड़ दिए। खाना खाने के लिए उसने उन्हें दिया मिट्टी का ठीकरा। जब खाने का वक्त होता तो कृपा-शंकर रसोइए को साथ लेकर गोठ में आता। कुछ रूखा सूखा उन ठीकरों में परोसवाता और पीने के लिए माँड देता।

कृपा-शंकर के माँ-बाप बेचारे उस पर आस लगाए बैठे थे कि बुढ़ापे में वह उनकी सेवा-टहल करेगा। लेकिन उनकी सारी आशा पर पानी फिर गया। वे अब उसके नाम को रोने लगे। आखिर उन्होंने यह सोच कर संतोष किया कि अब पोता पैदा होगा तो उस अन्याय की सारी कसर निकालेगा। आखिर उन्होंने जो सोचा था वही हुआ। कुछ दिनों बाद कृपा-शंकर के एक लड़का पैदा हुआ। "होनहार बिरवान के होत चीकने पात।" लड़के को देखते ही आस-पड़ोस वालों ने कहा—'लड़का ठीक अपने दादा को पड़ा है। यह उन्हीं की तरह उदार होगा।' इसीलिए वे उसको धर्मपाल कहने लगे। लेकिन बूढ़े और बुढ़िया के नसीब में पोते को जी भर देखना और

गोद्री में लेकर खेलाना भी बदा न था। कृपा-शंकर ने ऐसा बंदोबस्त किया कि लड़के को अपने दादा और दादी की कोई खबर भी न लग सके।

लेकिन धर्मपाल ने जब होश सम्हाला तो उसे अपने दादा और दादी की सारी दुर्दशा मालूम हो गई। उसके पिताने उसको गोठ में जाने से मना कर दिया था। लेकिन वह छिप कर रोज दादा के पास पहुँच जाता। कुछ दिन में कृपा-शंकर को इसका पता चल गया। लेकिन वह कुछ कर न सकता था। अब धर्मपाल खुले-खजाने दादा के पास जाने लगा। वह इसी सोच में पड़ा था कि कैसे दादा का कष्ट दूर करे।

एक दिन कृपा-शंकर अपने माँ-बाप को खाना देने के लिए गोठ में गया तो धर्मपाल भी उसके साथ हुआ। जब बूढ़े ने रूखा-सूखा खा लिया तो उसके ठीकरे में माँड डाल दिया गया। बूढ़े ने माँड पीने के लिए ठीकरा उठाया। लेकिन बुढ़ापे के कारण उसके

कमज़ोर हाथों से ठीकरा छूट गया और गिर कर टूक टूक हो गया। तब धर्मपाल ने जो पास ही खड़ा-खड़ा देख रहा था, झपट कर अपने दादा का हाथ पकड़ लिया और कहा— "दादा जी! आपने ठीकरा फोड़ दिया! कहिए; अब मेरा काम कैसे चलेगा? अब मेरे माँ-बाप बूढ़े हो जाएँगे तो फिर मैं उनको किस चीज़ में माँड पिलाऊँगा? आपने यह अच्छा नहीं किया। अब तो मुझे एक नया ठीकरा खरीदना होगा।" उसने गुस्सा दिखाते हुए कहा।

अब कृपा-शंकर को अपनी गलती मालूम हो गई। बूढ़े माँ-बाप के प्रति उसका जो बर्ताव था उसके लिए वह शर्मिन्दा होने लगा। अब उसे डर भी लगा कि इस पाप के फल-स्वरूप बुढ़ापे में कहीं उसकी भी ऐसी ही दुर्गत न हो। वह तुरंत अपने माँ-बाप के पैरों पड़ गया और आँसू बहाते हुए माफी माँगी। उसको पछताते देख कर उसके माँ-बाप का मन भी साफ हो गया। वे धर्मपाल की चतुराई देख कर बहुत खुश हुए और उसे बार बार आशीर्वाद देने लगे।

अब कृपा-शंकर ने बड़े प्रेम के साथ माँ-बाप को महल में ले जाकर रखा। उसने अब उनकी सेवा-टहल में कोई कसर न होने दी। उसके परिवार में फिर से आनंद का राज हो गया और उनके दिन हँसते-खेलते कटने लगे।

मन्त्री की बदली

एक घने जंगल में एक बाघ रहता था। वह उस जंगल का राजा था और उसका मंत्री था एक तोता। वह तोता बड़ा दयालु, दानी और परोपकारी था। जो कोई उस जंगल में आ जाता उसको तोता अपने राजा से कह कर रुपया-पैसा दिलवा और बड़ी इज़्ज़त के साथ जंगल पार करा देता। इसलिए तोता जब तक मंत्री रहा, तब तक जंगल के राजा का यश सारे संसार में फैल गया।

एक दिन एक गरीब ब्राह्मण उस जंगल में आया। उसने आकर बड़ी दीनता के साथ मंत्री तोते की शरण ली। तोते को उस बेचारे ब्राह्मण पर बड़ी दया आयी। उसने अच्छा समय देख कर जंगल के राजा से ग़रीब ब्राह्मण की सिफ़ारिश की। तब बाघ ने कहा—"अच्छा तो तुम उसकी सहायता कर दो। राजा का धर्म ही है कि वह संकट में पड़े हुए लोगों को उबारे। यह कौन सी बड़ी बात है!" तब तोते ने ब्राह्मण को बहुत-सा धन दे दिया। ब्राह्मण खुशी खुशी घर लौट गया।

वह ब्राह्मण उस धनसे एक साल तक बड़े सुख से रहा। लेकिन था वह बड़ा खर्चीला। इसलिए थोड़े ही दिनों में सारा धन चुक गया और वह फिर भूखों मरने लगा।

तब उसे फिर जंगल के मंत्री तोते की उदारता और दानशीलता याद आई। वह फिर उस जंगल की ओर चला।

लेकिन तब तक बाघ-राजा के दरबार में बड़े बड़े हेर-फेर हो गए थे। अब मंत्री के आसन पर तोते के बदले एक कौआराम विराजमान थे।

ब्राह्मण ने मंत्री कौआराम के पास जाकर अपनी राम-कहानी सुनाई। कौए ने कहा—'ब्राह्मणों के सत्कार से बढ़ कर और कौन सा पुण्य हो सकता है! आप यहीं बैठे रहिए।

रमाकांत जायसवाल

मैं अभी राजा से कह कर आपकी मदद करा देता हूँ।' यह कह कर कौआराम बाघ के पास गया। 'आज बहुत दिनों बाद हमारी किस्मत खुल गई है। देखिए न, बैठे-बिठाए मनुष्य का मांस खाने को मिल रहा है। एक भारी तोंद वाला मोटा-ताजा ब्राह्मण आपके दर्शन के लिए आया है। उसका कैसा सत्कार करना है सो तो आप जानते ही हैं!' कौआराम ने बाघ से कहा और जाकर ब्राह्मण को उसके पास भेज दिया। ब्राह्मण को देखते ही बाघ गरज कर उस पर टूटा। ब्राह्मण ने काँपते हुए हाथ जोड़ कर कहा—"राजन्! मैं ग़रीब बाल-बच्चों वाला आदमी हूँ। मुझे न मारिए। पिछली बार आपने मुझ पर बड़ी कृपा की थी। आप के ही दान से आज तक मैं बच्चों-सहित सुख से दिन काट रहा था। मैंने सोचा था कि इस बार भी आप मुझ ग़रीब की मदद कर बेड़ा पार लगा देंगे। इसीलिए मैं यहाँ आने का साहस कर सका। अगर मुझे मालूम होता कि आप मुझे मार डालेंगे तो मेरी क्या मजाल थी कि जो यहाँ तक आ जाता!" ब्राह्मण की ये बातें सुन

कर बाघ को कुछ तरस आ गया। उसने कहा—"पगले कहीं के! देखते नहीं कि जमाना बदल गया है। धर्म बदल गया है। साथ ही राज-मन्त्री भी बदल गया है। क्या तुम समझते हो कि अब भी दुनियाँ उसी बाबा आदम के ढंग पर चल रही है? तुम सोचते होगे कि राजा तो नहीं बदला है। लेकिन यह तुम्हारी भूल है। मन्त्री के साथ साथ-राजा भी बदल गया है। राजा तो मन्त्री की सलाह पर चलने वाला कठ-पुतला है। पिछली बार मेरे मन्त्री तोते ने तुम्हारी सिफ़ारिश की थी। इसलिए तुम्हें उतना धन मिला था। नए मन्त्री की सलाह के अनुसार आज मैं तुझे खा जाता। लेकिन तुमसे पुरानी जान-पहचान है। इसलिए तरस खाकर छोड़ देता हूँ। अब तुम यहाँ से तुरन्त रफ़ूचक्कर हो जाओ। नहीं तो कुशल न होगी।"

ब्राह्मण भगवान का नाम लेकर वहाँ से सिर पर पैर रख कर भाग निकला। वह मन ही मन डर रहा था कि कहीं बाघ फिर अपना निश्चय बदल न डाले।

ब्राह्मण की स्त्री बड़ी उतावली के साथ अपने पति की राह देख रही थी। ब्राह्मण को खाली हाथ हाँफते हुए आया देख कर उसका मन निराश हो गया। ब्राह्मण ने जब सारी कहानी उससे कह सुनाई तो उसने काली-माँ का नाम लेकर कहा—"धन्य काली मैया! उनकी कृपा से धन नहीं मिला तो न सही। जान तो बच गई! ग़रीबी में भी दिन किसी न किसी तरह कट ही जाते हैं। न होगा तो और किसी ऐसे राजा की शरण लेंगे जिसके दरबार में अच्छा मन्त्री हो।" यह कह कर उसने सुख की साँस ली।
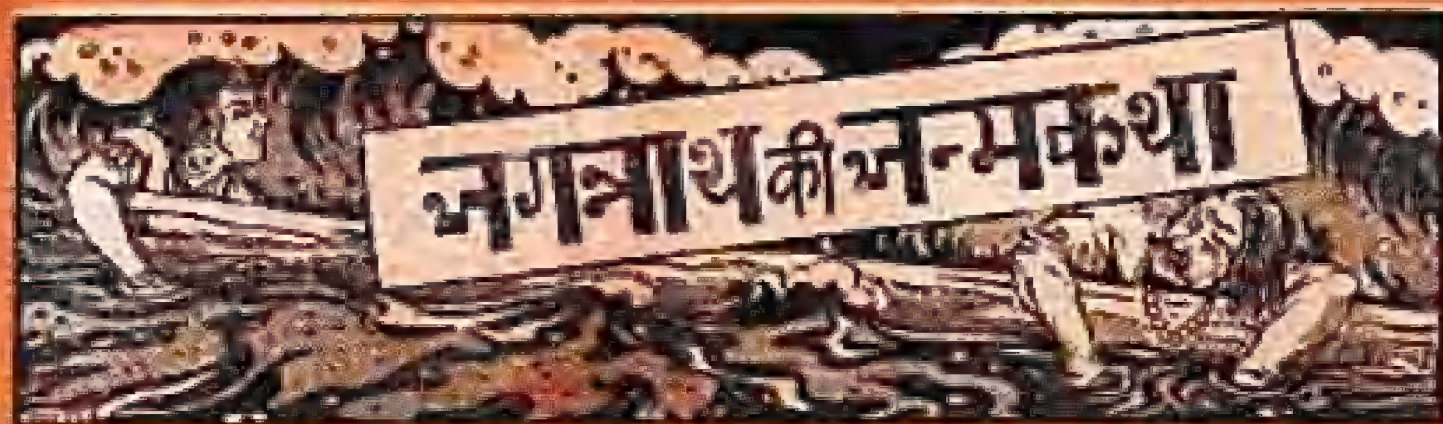
जगन्नाथ की जन्मकथा

पुराने ज़माने की बात है। इंद्रद्युम्न कलिंग देश का राजा था। उसे एक दिन समुंदर की सैर करने का शौक़ हुआ। राजा का शौक़ पूरा न हो तो और किसका हो! तुरंत हंस के आकार का एक सुंदर जहाज बनाया गया। राजा अपनी स्त्री और मंत्रियों के साथ उस पर चढ़ कर समुंदर की सैर करने निकला। जहाज ने लंगर उठाया। मस्तूल से पाल ताना गया और जहाज तीर की तरह लहरों को चीरता निकल पड़ा।

लेकिन न जाने, जहाज किस बुरी साइत में चला था! बीच समुंदर में जाते-जाते बड़ा भारी तूफ़ान आ गया। हवा के झोंकों से पाल की धज्जियाँ उड़ गईं। मस्तूल टूट गया और जहाज सूखे पत्ते की तरह डोलने लगा। जहाज के सब लोगों के प्राण नखों में समा गए। खलासियों ने जहाज को किनारे लगाने की बड़ी कोशिश की। लेकिन उनकी एक न चली। थोड़ी देर बाद पहाड़ जैसी एक ऊँची तरंग उठी और पल में जहाज को निगल गई! जहाज पर जितने लोग थे सभी जल-गर्भ में जाकर सदा के लिए सो गए। महाराज इंद्रद्युम्न गोते खा ही रहे थे कि उन्हें एक कुंदे का सहारा मिल गया। वे तैर कर जान बचाने की कोशिश करने लगे। थोड़ी देर बाद उन्हें ऐसा मालूम हुआ कि उस कुंदे का दूसरा सिरा पकड़ कर और कोई तैर रहा है। उन्होंने पूछा—"कौन है?" "मैं रानी हूँ।" जवाब आया। यह सुन कर महाराज को पहले तो बड़ी खुशी हुई! लेकिन तुरंत मन में विचार उठा कि आख़िर हम कितनी देर तक इस तरह तैरते रहेंगे! उन्होंने रानी से कहा—"चाहे जो कुछ भी हो, कुंदे को छोड़ना मत। अगर भगवान की कृपा हुई तो हम दोनों इसी के सहारे पार लग जाएँगे।" आख़िर हुआ भी

सुरेन्द्र चावड़ा

ऐसा ही। उसी कुंदे के सहारे तैरते हुए वे दोनों किनारे पहुँच गए।

और कोई होता तो उस कुंदे को वहीं छोड़ कर अपनी राह पकड़ता। लेकिन राजा और रानी ने ऐसा नहीं किया। उन्होंने समझा कि भगवान ने ही उस कुंदे के रूप में उनकी जान बचाई है। इसलिए उन दोनों ने बड़ी श्रद्धा के साथ उस कुंदे की प्रदक्षिणा की और उसे हाथ जोड़ कर प्रणाम किया। तब महाराज ने रानी से कहा—"इसी कुंदे के कारण आज हम दोनों की जान बची है। यह कोई मामूली कुंदा नहीं है। इसलिए हम इस कुंदे से दो देव-मूर्तियाँ बनवा कर उन्हें मन्दिर में रखेंगे और उनकी पूजा करेंगे। क्यों, यह अच्छा होगा न?" रानी ने जवाब दिया—"आपको तो अच्छी बात सूझ गई। हम जरूर ऐसा ही करेंगे। इसी कुंदेने तो हमारी जान बचाई है।"

राजा और रानी उस कुंदे को लिवा कर अपने महल में पहुँच गए। दूसरे दिन तक राज भर में यह बात फैल गई कि एक लकड़ी के कुंदे ने राजा की जान बचाई है। इसलिए राजा उससे दो देव-मूर्तियाँ बनवाना चाहते हैं। बस, अब क्या था! देश के कोने

कोने से शिल्पी लोग आकर राजा के दरबार में जमा हो गए। हर कोई कहता था कि मूर्तियाँ बनाने का काम मुझी को सौंप दीजिए। उन सब को देख कर राजा बड़ी चिंता में पड़ गया कि आखिर मूर्तियाँ बनाने का काम सौंपा जाए तो किसे? उसे कैसे मालूम हो कि सब से अच्छा शिल्पी कौन है? इसलिए उसने सब से कह दिया कि मैं इसका निर्णय कल करूँगा।

उस रात राजा को भगवान ने स्वप्न में दर्शन देकर कहा—"हे राजा! उस कुंदे से देव-मूर्तियाँ बनाने का काम उन शिल्पियों में से किसी को न सौंपना। वे उसके योग्य

जितने शिल्पी थे सब मन ही मन राजा को कोसते हुए चले गए। लेकिन हर किसी के मन में अब भी यही आशा थी कि जब इस बूढ़े से काम नहीं होगा तो राजा मुझी को बुलाएँगे।

उस बूढ़े शिल्पी ने पहले राजा के सामने कुछ शर्तें रखीं—"जब तक मैं ये मूर्तियाँ बनाता रहूँ तब तक कोई मेरे पास न आने पाए। मैं एक बन्द घर में बैठ कर मूर्तियाँ बनाऊँगा। जब मेरा काम खतम हो जाएगा तो मैं खुद किवाड़ खोल कर बाहर आ जाऊँगा। लेकिन इस बीच में कोई मुझे छेड़े। नहीं तो काम पूरा नहीं होगा।" राजा ने उसकी शर्तें मान लीं। लेकिन दरबारियों ने मन में कहा—"देखें, यह बूढ़ा अँधेरे में बैठ कर कैसी मूर्तियाँ बनाता है! क्या यह डरता है कि मूर्तियों को नजर लग जाएगी!"

राजा ने शिल्पी के लिए एक घर बनवा दिया। बूढ़ा उस कुंदे को लेकर घर में बैठ गया और अन्दर से सारे दरवाजे बंद कर लिए। यों कई दिन बीत गए। बूढ़ा खाना खाने के लिए भी घर से बाहर नहीं आता था। आखिर कुछ शिल्पियों के मन में इच्छा पैदा हुई कि जाकर देखें, बूढ़ा अंदर क्या कर

नहीं हैं। कल तुम्हारे दरबार में एक बूढ़ा शिल्पी आएगा। उसी को यह काम सौंपना।" इतना कह कर वे अन्तर्धान हो गए।

दूसरे दिन सचमुच ही एक बूढ़े शिल्पी ने राजा के दरबार में आकर कहा—'राजन्! मैं एक शिल्पी हूँ। मैंने सुना है कि आप तो मूर्तियाँ बनवाना चाहते हैं। मैं आपकी सेवा के लिए तैयार हूँ।" लेकिन वह शिल्पी बड़ा बूढ़ा था। वह तो बगैर लाठी के चल ही नहीं सकता था। इसलिए सभी दरबारी काना-फूसी करने लगे कि यह क्या खाक मूर्तियाँ बनाएगा! लेकिन राजा ने अपने सपने की याद करके उसी को यह काम सौंपा। तब वहाँ और

रहा है! उन्होंने घर के पास जाकर बड़ी देर तक किवाड़ के छेदों से कान लगा कर सुना। लेकिन उन्हें कहीं किसी तरह की आहट न सुनाई पड़ी। उस घर के अंदर सन्नाटा छाया हुआ था। तब उन्होंने राजा के पास जाकर कहा—"महाराज! उस बूढ़े ने आपको अच्छा चकमा दिया है। वह तो उस घर में है ही नहीं। उस घर से तो किसी तरह की आहट नहीं सुनाई देती। वह बूढ़ा सब की आँख बचा कर कभी का भाग गया होगा।" लेकिन राजा को तो उस बूढ़े पर पूरा विश्वास था। इसलिए उसने उन चुगलखोरों को खूब फटकारा। वे अपना सा मुँह लेकर चले गए।

और कुछ दिन बीत गए। लेकिन बूढ़े के घर के किवाड़ अब भी नहीं खुले। तब फिर कुछ शिल्पियों ने आकर राजा से कहा—"राजन्! बूढ़े के घर में तो बिल्कुल सन्नाटा छाया हुआ है। कहीं बूढ़ा भूखों मर तो नहीं गया? उसे कुछ न कुछ जरूर हो गया होगा। नहीं तो वह अब तक मूर्तियाँ बना चुका होता।" इस बार राजा को सचमुच शंका हो गई। इस तरह दिन-रात कान भरते रहने से राजा का धीरज भी टूट गया। तब राजा ने बूढ़े के घर के पास जाकर किवाड़ खटखटाए। लेकिन अन्दर से कोई जवाब नहीं आया। तब राजा ने निराश होकर जबर्दस्ती दरवाजा खुलवाया। लेकिन अन्दर जाकर देखने पर आश्चर्य! न वहाँ वह बूढ़ा शिल्पी ही था और न वह लकड़ी का कुंदा ही। वहाँ दो सुन्दर मूर्तियाँ मात्र पड़ी हुई थीं। उन मूर्तियों का रूप देख कर राजा मुग्ध हो गया। लेकिन इतने में उसे मालूम हुआ कि उन दोनों मूर्तियों के न हाथ हैं और न पैर। ये कैसी मूर्तियाँ हैं!

इतने में भगवान की उस मूर्ति ने कहा—"हे राजा! तुमने नाहक उतावली की। अगर

तुम थोड़े दिन और रुक जाते तो हम दोनों के हाथ-पैर भी बन जाते। तुम्हारी उतावली के कारण अब हमें बिना हाथ-पैर के ही रह जाना पड़ेगा।"

तब इन्द्रद्युम्न ने दंडवत करके कहा—"भगवान! क्षमा कीजिए। मुझे शङ्का हो गई थी कि वह बूढ़ा मर गया है। इसीलिए मैंने किवाड़ खुलवाए। लेकिन वह शिल्पी कहाँ है? वह कहीं नहीं दिखाई देता!"

'मैं ही वह शिल्पी हूँ।' भगवान ने कहा।

अब महाराज को अपनी भूल मालूम हो गई। लेकिन 'अब पछताए होत क्या, चिड़ियाँ चुग गईं खेत!' उन्होंने तुरंत सागर किनारे पुरी में, जहाँ उन्हें वह कुंदा मिला था, एक बड़ा भारी मंदिर बनवाया। उस मंदिर में उन्होंने दोनों मूर्तियों की प्रतिष्ठा करवाई।

उसी दिन से उड़ीसा का 'पुरी-जगन्नाथ' बड़ा भारी तीर्थ-स्थान बन गया। आज भी भारत के कोने-कोने से लाखों लोग हर साल जगन्नाथजी देखने जाते हैं।
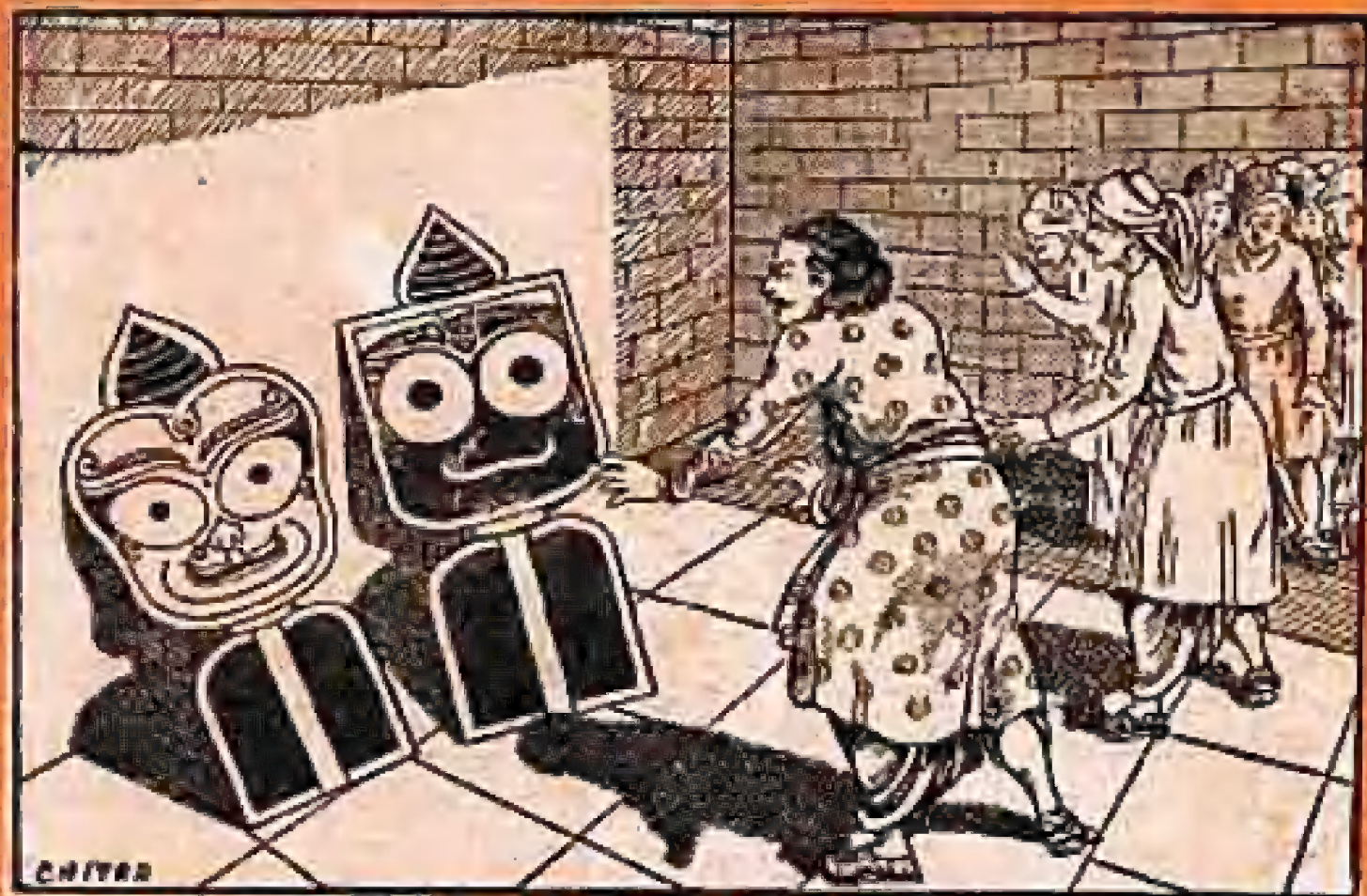
एक शिकारी था जिसका नाम था धनुञ्जय। वह बड़ा हृष्ट-पुष्ट, सुन्दर जवान था। डर तो उसे छू तक नहीं गया था। घने जङ्गलों में, ऊँचे पहाड़ों पर और खतरनाक जगहों में वह अकेला घूमा करता था।

एक दिन धनुञ्जय तड़के उठ कर एक नए जङ्गल की तरफ़ चला। उस जंगल के बीचों-बीच घुसने पर उसे एक मैदान मिला। वहाँ हरी मुलायम घास कालीन की तरह बिछी हुई थी। जगह-जगह सुन्दर रंग-बिरंगे फूल सुगन्ध फैला रहे थे।

उस मैदान में थोड़ी दूर आगे बढ़ कर वह अचानक रुक गया। उसे संगमर्मर का एक गोल चबूतरा सामने दीख पड़ा। उसके चारों ओर तरह-तरह के फूल खिले हुए थे। धनुञ्जय अनेकों जङ्गलों की सैर कर चुका था। लेकिन ऐसे फूल उसने कहीं नहीं देखे थे। शायद वे देव-लोक के फूल थे। धनुञ्जय ने सोचा कि चलो, उस चबूतरे पर बैठें और थोड़ी देर आराम करें। लेकिन उस पर जाने के लिए उसे कोई राह नहीं मिली।

धनुञ्जय खड़ा-खड़ा सोच रहा था कि अब क्या किया जाए? इतने में उसे कहीं से एक अलौकिक गान सुनाई देने लगा। वैसा गान उसने कभी नहीं सुना था। वह किसी मनुष्य का कण्ठ नहीं जान पड़ता था। धनुञ्जय ने जब सिर उठा कर चारों ओर देखा तो उसे आसमान से कोई गोल-गोल चीज़ धीरे-धीरे जमीन की ओर उतरती दीख पड़ी। धनुञ्जय समझ गया कि वह गाना उसी से आ रहा है।

ज्यों-ज्यों वह चीज़ जमीन के नजदीक आती गई त्यों-त्यों उसका रूप भी स्पष्ट होने लगा। साथ-साथ गाना भी स्पष्ट सुनाई देने

चन्द्रप्रकाश सिंह

लगा। थोड़ी देर में धनुञ्जय ने देखा कि वह एक उड़न-खटोला है और उसमें कोई बैठा है। गौर से देखने पर धनुञ्जय को उसमें सात अत्यन्त सुंदर बालाएँ दिखाई पड़ीं। देखने में वे सब एक-सी थीं। यह भी नहीं कहा जा सकता था कि उनमें कौन बड़ी है और कौन छोटी। सभी मानों एक ही सांचे में ढली हुई थीं।

वे सात युवतियाँ घुटनों तक लटकने वाले लम्बे, काले केश फहराती नीचे उतर आईं और एक दूसरे का हाथ पकड़ कर उस चबूतरे पर नाचने लग गईं। उनके नृत्य से उस चबूतरे के चारों ओर सुनहरी किरणों का एक घेरा-सा बन गया। उनका गाना स्वर्ग की नदी मंदाकिनी के कलरव-सा जान पड़ता था।

यद्यपि वे सात कुमारियाँ एक-सी थीं, फिर भी ध्यान से देखने पर पता चल जाता था कि एक उनमें सबसे ज्यादा सुंदर है। उनकी बातें सुनने से धनुञ्जय को मालूम हो गया कि वह सब बहनों से छोटी है और उसका नाम है तारा। उसको देखते ही धनुञ्जय मुग्ध हो गया।

वह थोड़ी देर तक चुपचाप वैसे ही खड़ा रहा। लेकिन आखिर जब उससे नहीं रहा गया तो उसने ज़ोर से उन्हें पुकारा। उसको देखते ही सात कन्याएँ झट उड़न-खटोले में बैठ गईं और पलक मारते आँखों से ओझल हो गईं।

धनुञ्जय हाथ मलता हुआ घर लौटा। राह में उसे एक तोता दीख पड़ा। धनुञ्जय ने जब उस पर निशाना लगाया तो उसने कहा "भाई! अगर तुम मुझे छोड़ दो तो मैं तुम्हें एक ऐसा मन्त्र बताऊँगा जिसके अपने

से तुम पशु-पक्षी का रूप भी धारण कर सकते हो।" धनुञ्जय ने धनुष पर से तीर उतार लिया। पेड़ से उतर कर तोता उसके कंधे पर आ बैठा और उसने धीरे से उसके कानों में मन्त्र कह दिया।

दूसरे दिन धनुञ्जय एक बिलाव का रूप धारण कर उस चबूतरे के पास लेट रहा। जब समय पर वे कुमारियाँ फिर आसमान से उतरीं तो वह उठ कर उनकी ओर चला। लेकिन उसकी आहट सुनते ही वे सब उड़न-खटोले पर चढ़ गईं और पल भर में गायब हो गईं। धनुञ्जय फिर निराश होकर लौट आया।

तीसरे दिन धनुञ्जय ने बड़ी देर तक सोच-विचार कर एक सुनहरे चूहे का रूप धारण किया और चबूतरे के नीचे क्यारी में इधर-उधर दौड़ने लगा। समय पर देव-कुमारियाँ आसमान से उतरीं और चबूतरे पर रोज़ की तरह नृत्य करने लगीं। थोड़ी देर बाद उनका नृत्य समाप्त हो गया और वे लौट कर जाने की तैयारियाँ करने लगीं। इतने में एक सुनहरा चूहा चबूतरे पर चढ़ आया और इधर-उधर दौड़ने लगा। उस चूहे को देख कर सबसे छोटी लड़की तारा उस पर लट्टू हो गई। वह उसे पकड़ने की कोशिश करने लगी। लेकिन उसने उसे पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया तो उस सुनहरे चूहे ने मनुष्य का रूप धारण कर लिया और उसका हाथ पकड़ लिया। यह देख कर अन्य कुमारियाँ भयभीत हो गईं और तारा को वहीं छोड़ कर उड़न-खटोले पर जा बैठीं। देखते-देखते उड़न-खटोला आसमान में छिप गया।

लड़का भी पैदा हुआ। लेकिन तारा के मन में यह शंका बनी रही कि न जाने, उसके पिता क्या सोचते होंगे!

तारा देवराज की सात कन्याओं में सब से छोटी थी। उसके पिता उसी को सबसे ज्यादा प्यार करते थे। ज्यों-ज्यों दिन बीतते गए, उसके मन में पिता को देखने की इच्छा बढ़ती गई।

वह जानती थी कि बाँस की एक बड़ी टोकरी बना कर अपने दिव्य-गान की महिमा से वह उसे उड़न-खटोले की तरह आसमान में उड़ा ले जा सकती है। इस तरह पिता को देखने जाना उसके लिए कोई मुश्किल काम न था। लेकिन उससे धनुञ्जय को छोड़ते भी नहीं बनता था।

इसी तरह और कुछ दिन चले गए। आख़िर जब उससे न रहा गया तो उसने जाने का निश्चय कर लिया। बाँस की खपचियों की एक बड़ी टोकरी तैयार की। एक दिन वह पति की आँख बचा कर टोकरी बगल में उस चबूतरे के पास ले गई और झट अपने लड़के के साथ टोकरी में बैठ कर गाना शुरू

धनुञ्जय अब बड़े प्रेम से तारा को समझाने-बुझाने लगा—"डरने की कोई बात नहीं। मैं तुम्हें कोई कष्ट नहीं दूँगा। मैं तुम्हें हमेशा सिर-आँखों पर रख कर पूजा किया करूँगा।" इसके बाद उसने उसे तरह-तरह की कहानियाँ सुनाईं। अपने शिकार की मनोरंजक घटनाएँ खूब बढ़ा-चढ़ा कर उसके सामने बखान कीं। यहाँ तक कि थोड़ी देर में तारा का सारा डर दूर हो गया। धनुञ्जय ने उसे अपने घर ले आकर ब्याह कर लिया। कुछ दिन बाद तारा सचमुच उससे प्रेम करने लगी। उसके एक सुंदर

कर दिया। तुरंत टोकरी ज़मीन से उठ कर आसमान में उड़ने लगी।

धनुञ्जय दूर से यह गाना सुन कर अचरज में पड़ गया। उसने सोचा—"इतने दिनों बाद आज फिर कहाँ से यह गीत सुनाई दे रहा है!" जब उसने आसमान की ओर नज़र फेरी तो उसे उड़ती हुई टोकरी में लड़के के साथ तारा दीख पड़ी। वह घबरा कर चिल्ला उठा—"तारा! तारा! लौट आओ! मेरी बात मानो और लौट आओ! तुम मुझे क्यों छोड़े जा रही हो? मैंने क्या अपराध किया है?" वह बहुत गिड़-गिड़ाया, पर टोकरी ऊपर उड़ती ही गई। यहाँ तक कि थोड़ी देर में वह आँखों से ओझल हो गई। बेचारे धनुञ्जय की पुकार सूने आसमान में गूँज कर रह गई।

वह बेचारा अपना सब कुछ खोकर पागल बना घर लौटा। सूना घर उसे काट खाने लगा। शोक में डूबा हुआ वह संसार से विरक्त हो गया और ज्यों-त्यों कर पहाड़-से दिन काटने लगा। लेकिन उसके मन के किसी

कोने में अब भी आशा की किरण बच रही थी।

अपनी प्यारी लड़की तारा को पुत्र-सहित आई देख कर उसका पिता बहुत खुश हुआ। तारा पिता के घर में खुशी से रहने लगी। लेकिन उसके मन में धनुञ्जय की चिंता बनी रही। उसका लड़का भी दिन-दिन पिता की चिंता में घुलने लगा। दिन-दिन उसका मुख पीला पड़ता गया और वह दुबला होने लगा। यह देख कर तारा के पिता ने एक दिन उसे बुला कर कहा—"बेटी! लड़के को पिता की याद सता रही है। देखती नहीं,

वह कितना दुबला हो गया है! तुम पृथ्वी पर जाकर अपने पति को भी यहाँ क्यों नहीं ले आतीं? तुम दोनों यहाँ सुख से रह सकते हो।"

तारा तो यह चाहती ही थी। वह तो डर के मारे अब तक पिता से यह बात न कह सकी थी। नहीं तो वह कभी की पति को यहाँ ले आती। आज जब उसके पिता ने खुद उसे इजाज़त दे दी तो उसका सारा संकोच दूर हो गया। वह तुरंत उड़न-खटोले पर बैठ कर धरती पर उतर आई।

धनुजय उस समय उसी चबूतरे के निकट बैठा-बैठा तारा की याद कर रहा था। इतने में अचानक उसे वही दिव्य-गान सुनाई पड़ा तो पहले उसे अपने कानों पर विश्वास न हुआ। लेकिन जब उसने सिर उठा कर आसमान की तरफ़ देखा तो उसे बहुत दूर पर एक काला धब्बा-सा दिखाई दिया जो पल-पल बड़ा होता जाता था। बेचारा खुशी के मारे बावला बन गया। थोड़ी ही देर में उसकी प्यारी तारा उसके सामने आ खड़ी हुई। दोनों की आँखों से आँसू बेरोक-टोक बह रहे थे।

तारा ने उससे सारा हाल कह सुनाया। वह दो-तीन दिन पृथ्वी पर आनन्द से विचरी। फिर पति को लेकर पिता के घर चली गई। तारा के पिता ने धनुजय की बड़ी आव-भगत की। धनुजय वहाँ बड़े सुख से रहने लगा।

आज भी वे दोनों दम्पति चिड़ियों का रूप धारण कर कभी-कभी पृथ्वी पर आ जाते हैं। वे अपनी पुरानी झोंपड़ी के चारों ओर मँडराते हैं और कुछ देर बाद फिर अपने लोक को लौट जाते हैं।

एक बार एक गाँव में एक अमीर के घर बड़ी धूम-धाम से शादी हो रही थी। सैकड़ों लोग शादी में आए थे। लोग पङ्गत के बाद पङ्गत खाने बैठते थे। ब्राह्मण-भोजन चल रहा था। न जाने, कहाँ कहाँ से आकर झुण्ड-के-झुण्ड ब्राह्मण जमा हो गए थे। परोसने-वाले नाकों दम हो रहे थे। पर बेचारे बड़ी मुस्तैदी से परोस रहे थे।

उस रोज़ पङ्गत में दो ब्राह्मण बैठे थे। उनमें एक बड़ा बातूनी था। वह पङ्खा झलता हुआ, पकवानों का स्वाद सराहता हुआ, धीरे-धीरे खा रहा था।

दूसरा ब्राह्मण अनमने चित्त से भोजन कर रहा था। इसलिए पत्तल की तरफ़ उसका ध्यान न था।

उस रोज ख़ास कर ब्राह्मणों की पङ्गत में परोसने के लिए यजमान ने बहुत बढ़िया आम मँगवाए थे। ये बड़े क़ीमती और बहुत ही रसीले थे।

बातूनी ब्राह्मण ने जब आम खाना शुरू किया तो गुठली उसके हाथ से छूट कर बगल के अनमने ब्राह्मण के पत्तल में जा गिरी। यह देख वह मन ही मन डरने लगा कि न जाने, यह ब्राह्मण कैसा आदमी है? मालूम नहीं, अब वह कितना हल्ला मचाएगा! भोजन छोड़ कर उठ जाएगा क्या! वह मन ही मन पछताने लगा कि आज मैं नाहक यहाँ चला आया। न जाने, कितना भला-बुरा सुनना पड़ेगा! उसे सूझता नहीं था कि अब क्या किया जा सकता है!

सुमित्रा राउत

लेकिन वह दूसरा ब्राह्मण अपने बगल वाले से बातें कर रहा था। इसलिए उसने यह सब देखा नहीं। थोड़ी देर बाद जब उसने अपने पत्तल की ओर नज़र फेरी तो उसे एक के बदले दो गुठलियाँ दिखाई दीं। उसने बातूनी ब्राह्मण से कहा—"मिश्रजी! देखिए तो, कितने आश्चर्य की बात है! मेरे आम में दो गुठलियाँ हैं! मैंने आज तक ऐसे आश्चर्य की बात न कहीं देखी और न सुनी थी।"

यह सुन कर उस ब्राह्मण ने (जिसके हाथ से गुठली छूट गई थी) मन ही मन सोचा—'यह तो भगवान ने इस सङ्कट से बाहर होने के लिए अच्छा रास्ता दिखा दिया है।' उसने जवाब दिया—"हाँ, हाँ, शर्मा जी, देखिए न! उससे भी बड़ा आश्चर्य यह है कि मेरे आम में गुठली है ही नहीं! भगवान की लीला अपरम्पार है। उसके लिए कुछ भी अनहोनी नहीं।" इस तरह उसकी लाज बच गई।

उन दोनों की बातें सुन कर लोग खूब हँसने लगे। उन्होंने सोचा—"कहीं ये दोनों पागल तो नहीं हो गए हैं!" लेकिन असली रहस्य उनमें से किसी की समझ में नहीं आया।

भूल-चूक सभी से हो जाती है। लेकिन बुद्धिमानी के साथ अपनी भूल सुधार लेने में ही आदमी की तारीफ़ है।

यहाँ नौ तस्वीरें हैं जो सभी भिन्न भिन्न मालूम होती हैं। लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं हैं। इन में दो बिलकुल एक सी हैं। बताओ तो वे दोनों कौन हैं? अगर न बता सको तो ५२-वाँ पृष्ठ देखो।

सफाई

मैंने पिछली बार बताया था कि बच्चों को अच्छी आदतें डालनी चाहिए। उनमें सबसे पहली सफाई की आदत है। जब बदन साफ़ रहता है तब मन भी निर्मल रहता है।

बदन को साफ़ रखने का पहला साधन है स्नान। स्नान करने से बदन में फुर्ती आती है और थकान दूर हो जाती है। मानसिक कार्य करने वालों के लिए स्नान से बढ़ कर कुछ नहीं है। सुस्ती, काम करने में मन न लगाना, सिर घूमना इत्यादि नियम से स्नान न करने के फल हैं। स्नान करने से माँस-पेशियों को आराम मिलता है। रगों में खून साफ़ी से दौड़ने लगता है और त्वचा की गन्दगी दूर हो जाती है।

लेकिन कुछ लोग ऐसे आलसी होते हैं कि नहाते हुए उनकी जान जाती है। फिर इसमें अचरज की कौन सी बात है कि वे अक्सर त्वचा-सम्बन्धी रोगों के शिकार बनते और हमेशा परेशान रहते हैं!

स्वास्थ्य की दृष्टि से घर की सफ़ाई का भी बहुत ज्यादा महत्व है। अक्सर गन्दे घर में रहने वाले हमेशा बीमार रहते हैं। घरों और बाजारों की गन्दगी से तरह तरह के संक्रामक रोग फैलते हैं। गन्दे आलीशान महलों में रहने से भी साफ़ झोंपड़ियों में रहना बेहतर है। घरों में दोनों जून झाड़ू देना चाहिए। जहाँ धूल ज्यादा हो वहाँ पानी का छिड़काव करना चाहिए। हफ्ते दस दिन में एक बार सारा घर लीप-पोत लेना चाहिए। पक्का फर्श हो तो धो लेना चाहिए। गन्दे घर में रहने से बढ़ कर कोई नरक नहीं है।

तुम्हारी दीदी

पार्वती देवी

कुमारी रेणुका

बालम
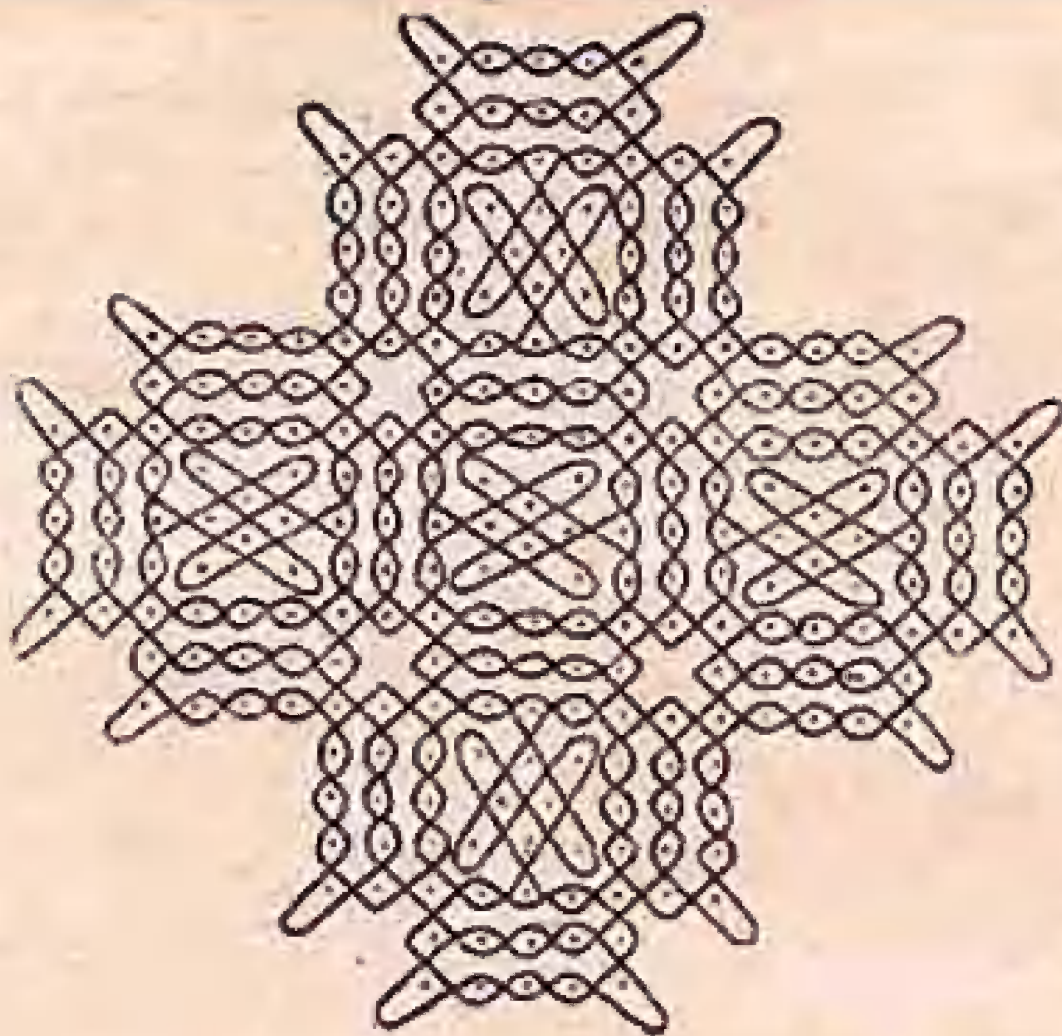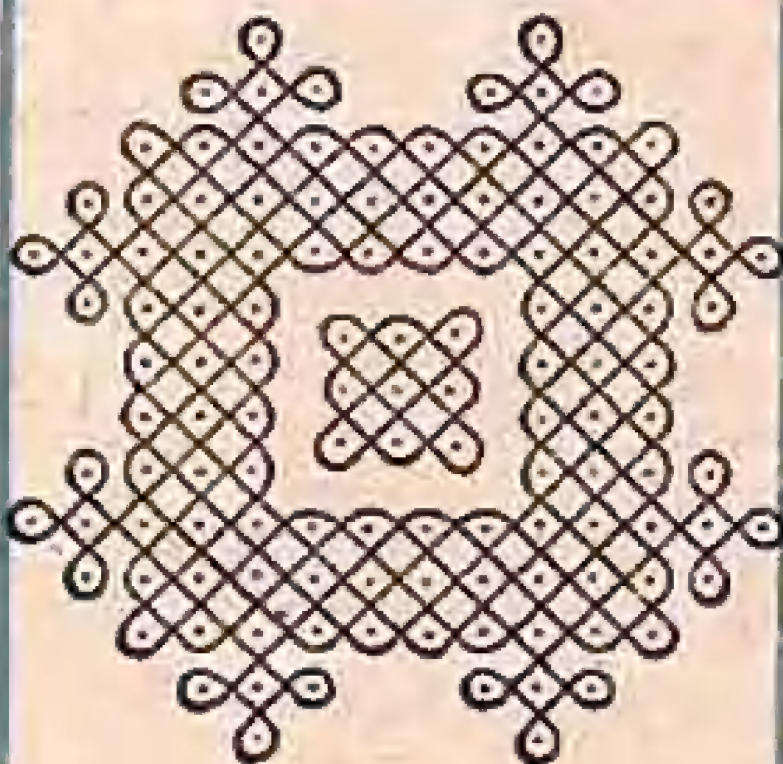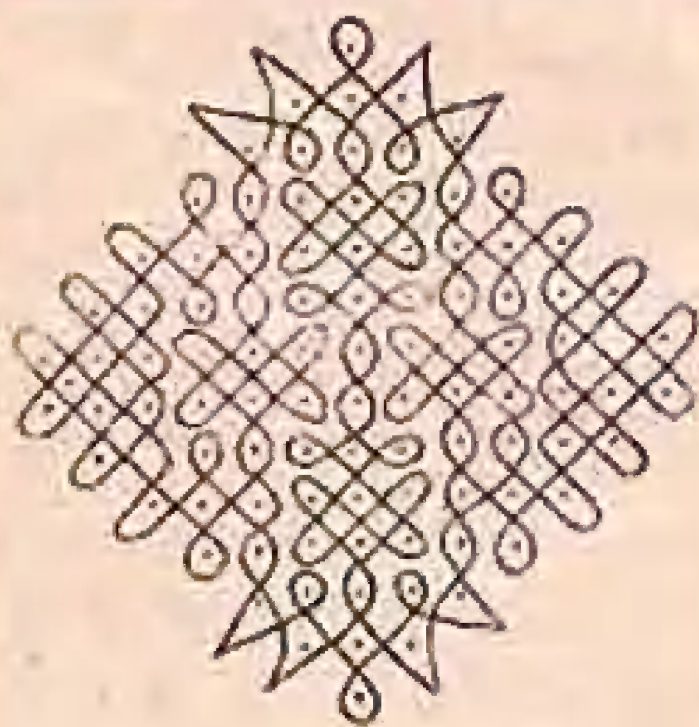
बोतल में आम!

पिछली बार मैंने तुम्हें बताया था कि बोतल में अण्डा कैसे दिखाया जा सकता है। इस बार मैं तुम्हें बताऊँगा कि तंग मुँह वाली बोतल में आम का फल कैसे घुसाया जा सकता है। यह बहुत ही आश्चर्य-जनक है।

अब तुम सोचते होगे कि शायद अण्डे की तरह इसे भी एसेटिक एसिड में या सिरके में डुबो कर कुछ समय तक रखना होगा। और नहीं तो सोचते होगे कि बोतल का पेंदा तोड़ कर आम उसमें घुसाने के बाद फिर चिपका देना होगा। लेकिन नहीं।

अब तुम कल्पना करोगे कि यह कोई मामूली आम नहीं है। यह कोई रबर जैसी लचीली चीज़ का बना हुआ आम है। लेकिन मैं फिर कहूँगा—'नहीं।'

अब आप सारा धीरज खोकर पूछ बैठेंगे कि फिर आम उस बोतल में कैसे घुस आएगा? क्या कोई मन्तर-यन्तर है इसके लिए? लीजिए, मैं इसका रहस्य खोले देता हूँ। यह ऐसा आसान है कि आप सोचने लगेंगे कि ऐसी मोटी बात हमारी अक्ल में क्यों नहीं आई!

एक तंग मुँह वाली बोतल ले लीजिए। एक फले हुए आम के पेड़ के पास जाइए। एक अमौरी जो उस बोतल के तंग मुँह में समा जाए, चुन लीजिए। फिर अमौरी बोतल में घुसा कर, बोतल को मज़बूत धागे से डाली में कस कर बाँध दीजिए। फिर एक महीने तक उसको वैसे ही छोड़ दीजिए तो देखिएगा कि आम बड़ा हो गया है और

अब बोतल से बाहर नहीं निकल सकता है। बस, डण्ठल तोड़ लीजिए और बोतल को घर ले जाइए।

तमाशा करते समय बोतल में जो आम है ठीक उसीके जैसा आम एक और ले लीजिए और एक खाली बोतल भी। फिर दोनों दर्शकों के सामने रख कर कहिए कि 'देखिए, इतना बड़ा आम मैं इस बोतल में घुसा दूँगा।' वे सब आँखें फाड़-फाड़ कर देखने लगेंगे कि देखें, यह आम इस तंग मुँह वाली बोतल में कैसे समा जाता है!

अब आप आम रखी हुई बोतल ले लीजिए और सफ़ाई से खाली बोतल और आम को छिपा दीजिए। लोग बोतल में आम देख कर खुशी से तालियाँ बजाने लगेंगे।

बोतल में आम को बहुत दिन तक बनाए रखने के लिए उसमें शहद भर दीजिए।

[अगर कोई इस सम्बन्ध में पत्र-व्यवहार करना चाहें तो सीधे प्रोफेसर साहब को लिखें। प्रोफेसर साहब खुद उनके सारे सन्देह दूर करेंगे। हाँ, प्रोफेसर साहब को पत्र अंग्रेजी में ही लिखा जाए। यह ध्यान में रहे। प्रोफेसर साहब का पता:—

प्रोफेसर पी. सी. सरकार, मैजीशियन
पो. बा. ७८७८ कलकत्ता १२]

मेल से लाभ

['अशोक' बी. ए.]

एक पेड़ पर बना घोंसला
एक काग था रहता।
नील-गगन में उड़ता फिरता
सदा मौज था करता।

कुछ दिन बीते, तब मादा ने
अण्डे दो चार दिए।
एक सर्प ने चुपके से आ
सब अण्डे साफ़ किए।

परेशान हो तब दोनों ने
कौओं को बुलवाया।
सब कौओं के आ जाने पर
अपना हाल सुनाया।

सब कौओं ने आपस में मिल
राय यही ठहराई—
कभी सर्प ऊपर आये तब
हमला कर दो भाई!

अण्डे चार हुए जब सुन्दर
सर्प तभी चढ़ आया।
हमला किया सभी ने मिलकर
नीचे उसे गिराया।

आपस में मिलकर रहने से
काम सरल हो जाते।
एक एक ग्यारह होते हैं
बुद्धिमान बतलाते।

अङ्कों का शिखर!

१ — × ८ + १ = ९

१२ — × ८ + २ = ९८

१२३ — × ८ + ३ = ९८७

१२३४ — × ८ + ४ = ९८७६

१२३४५ — × ८ + ५ = ९८७६५

१२३४५६ — × ८ + ६ = ९८७६५४

१२३४५६७ — × ८ + ७ = ९८७६५४३

१२३४५६७८ — × ८ + ८ = ९८७६५४३२

१२३४५६७८९ — × ८ + ९ = ९८७६५४३२१

बताओ तो ?

किसी गाँव में सात चोरों का एक दल रहता था। वे एक दिन एक अमीर के घर चोरी करने गए। उनमें एक को एक रुपयों की थैली मिली। और जितने चोर थे सब गहनों की फ़िराक में पड़े हुए थे। लेकिन इतने में घर वालों के जग पड़ने से चोरों को दुम दबा कर भाग जाना पड़ा। एक-एक चोर एक-एक दिशा में भाग गया। जिस चोर को रुपयों की थैली मिली थी वह भाग कर हाँफते-हाँफते एक जङ्गल में पहुँचा और थैली खोल कर रुपए गिनने लगा। इतने में उसी के दल का दूसरा चोर आ पहुँचा। दोनों ने थैली में के रुपए बराबर बाँट लिए तो एक रुपया बच रहा। इतने में तीसरा चोर आया। तीनों ने फिर से बाँट लिया। तो भी एक रुपया बच रहा। इतने में चौथा चोर आया और चारों ने बाँट लिया। फिर भी एक रुपया बच रहा। पाँचवाँ चोर भी आया। पाँचों ने फिर बँटवारा किया। तो भी एक रुपया बच रहा। इतने में छठा चोर आया और छहों ने बाँट लिया। तो भी एक रुपया बच रहा। आखिर सातवाँ चोर आया और सातों ने बाँट लिया। इस बार एक रुपया भी नहीं बचा। बताओ तो थैली में कुल कितने रुपए थे? अगर न बता सको तो ५६-वाँ पृष्ठ देखो।

यह सात हिस्सों में कटी हुई एक जानवर की तस्वीर है। इन हिस्सों को यदि फिर ठीक ठीक मिलाया जाय तो जानवर दिखाई पड़ेगा। यदि तुम यह न कर सको तो ५६-वाँ पृष्ठ देखो।

यहाँ १ से लेकर ३७ तक नुक्ते हैं। ये मामूली नुक्ते नहीं हैं। इन में एक चोर छिपा हुआ है। तुम पेन्सिल से लकीर खींच कर इन नुक्तों को क्रम से मिला दो तो छिपा हुआ चोर पकड़ा जायगा। ज़रा देखो तो सही कि वह चोर कौन है?

इस वर्ग के बीचों बीच जो साड़ियाँ हैं वे इन छः औरतों में से किसी एक को ही मिल सकती हैं। बताओ तो किसे मिलेंगी?

नौ तस्वीरों वाली पहेली का जवाब:

४ - ८ संख्या वाली तस्वीरें एक सी हैं।

संकेत

बाएँ से दाएँ

१. मेघ

३. कमी

५. सच

६. बिना वजह

८. नहीं गिरा हुआ

९. सिंह

१२. भयङ्कर

१३. समय

ऊपर से नीचे

१. एक संख्या

२. निशाना

३. प्रभुता

४. जलदेवता

७. विरुद्ध

८. प्रसिद्ध बौद्ध सम्राट

१०. चल पड़ना

११. शरम

1 वा		2		3		4 व
	●				●	
5		●	6			
		7 प्र	●	र		
8				●	9	10
	●			11	●	
12 क				13		ना
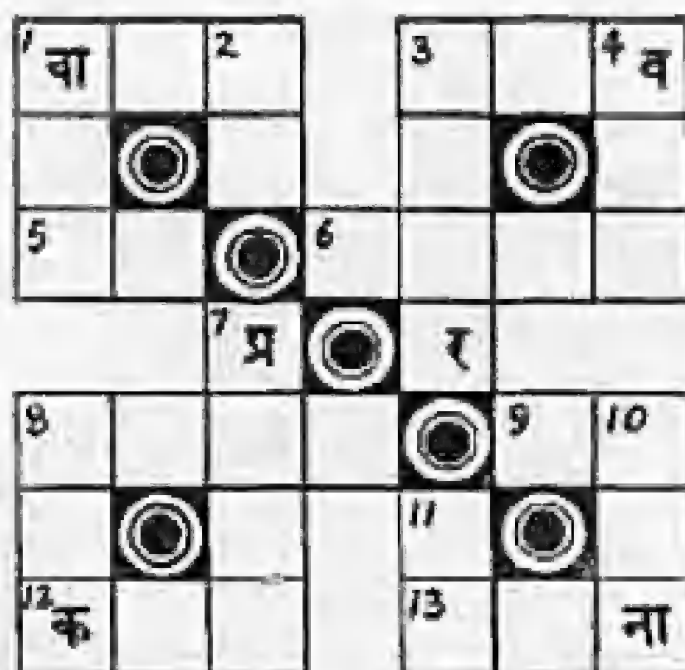
कीमती गहना

एक बार एक राजा ने किसी शहर पर घेरा डाल कर उस पर कब्ज़ा कर लिया। उस शहर में जितने मर्द थे सबको वह तलवार के घाट उतारना चाहता था। लेकिन औरतों, बूढ़ों और बच्चों को वह नहीं मारना चाहता था। इसलिए उसने हुक्म दिया—"शहर की सभी औरतें सुबह होते-होते अपनी क़ीमती चीज़ें लेकर शहर के बाहर चली जायँ।"

सवेरा होते-होते उस शहर की सभी औरतें बड़ी-बड़ी गठरियाँ पीठ पर लाद कर बूढ़ों और बच्चों के साथ शहर छोड़ कर चल दीं। तब राजा ने अपने सिपाहियों से कहा—'जाओ! अब शहर में जितने जवाँमर्द हैं सब को क़ैद कर लाओ।' लेकिन उन्हें शहर में कहीं एक भी आदमी न दिखाई दिया।

अब राजा को याद आ गया कि कल हरेक औरत अपनी पीठ पर एक-एक भारी गठरी ढो ले गई थी। सारा रहस्य उसकी समझ में आ गया। उसने कहा—'ठीक तो है! पति ही स्त्री के लिए सबसे क़ीमती चीज़ है।

तीन चित्रकार

किसी गाँव में तीन चित्रकार रहते थे। एक बार उस गाँव के एक अमीर आदमी ने कहा कि तीनों में जो सबसे अच्छा चित्र बनाएगा उसे मैं एक सोने का हार ईनाम में दूँगा। तीनों ने तीन चित्र बनाए। एक ने फूलों के गुच्छे का चित्र बनाया। दूसरे ने फलों की टोकरी का चित्र बनाया। तीसरे ने एक परदे का चित्र बनाया।

एक भौंरा आया और मधु की लालच में उस फूलों के गुच्छे के चित्र पर बैठ कर धोखा खा गया। एक तोता आया और फलों के चित्र पर चोंच मार कर धोखा खा गया।

इतने में वह अमीर आदमी आया और वहाँ दो ही चित्र देख कर उसने समझा कि तीसरा चित्र उस परदे के पीछे छिपा हुआ है। उसने परदा उठाना चाहा तो मालूम हुआ हुआ कि वह परदा नहीं है, परदे का चित्र है। उसने तीसरे चित्रकार को ईनाम दिया। उसने कहा—'फूलों के गुच्छे ने एक कीड़े को धोखे में डाला और फलों की टोकरी ने एक चिड़िया को। लेकिन इस परदे के चित्र ने एक आदमी को धोखे में डाला। इसलिए मैंने ईनाम इसी को दिया।

पिछली बार तुम ने ग्रा.मा को रंग लिया होगा। इस बार सोचो कि हाथियों को किन रंगों से रंगना चाहिए। इस तस्वीर को रंग कर अपने पास रख लेना और अगले महीने के चन्दामामा के पिछले कवर पर के चित्र से उसका मिलान करके देख लेना।
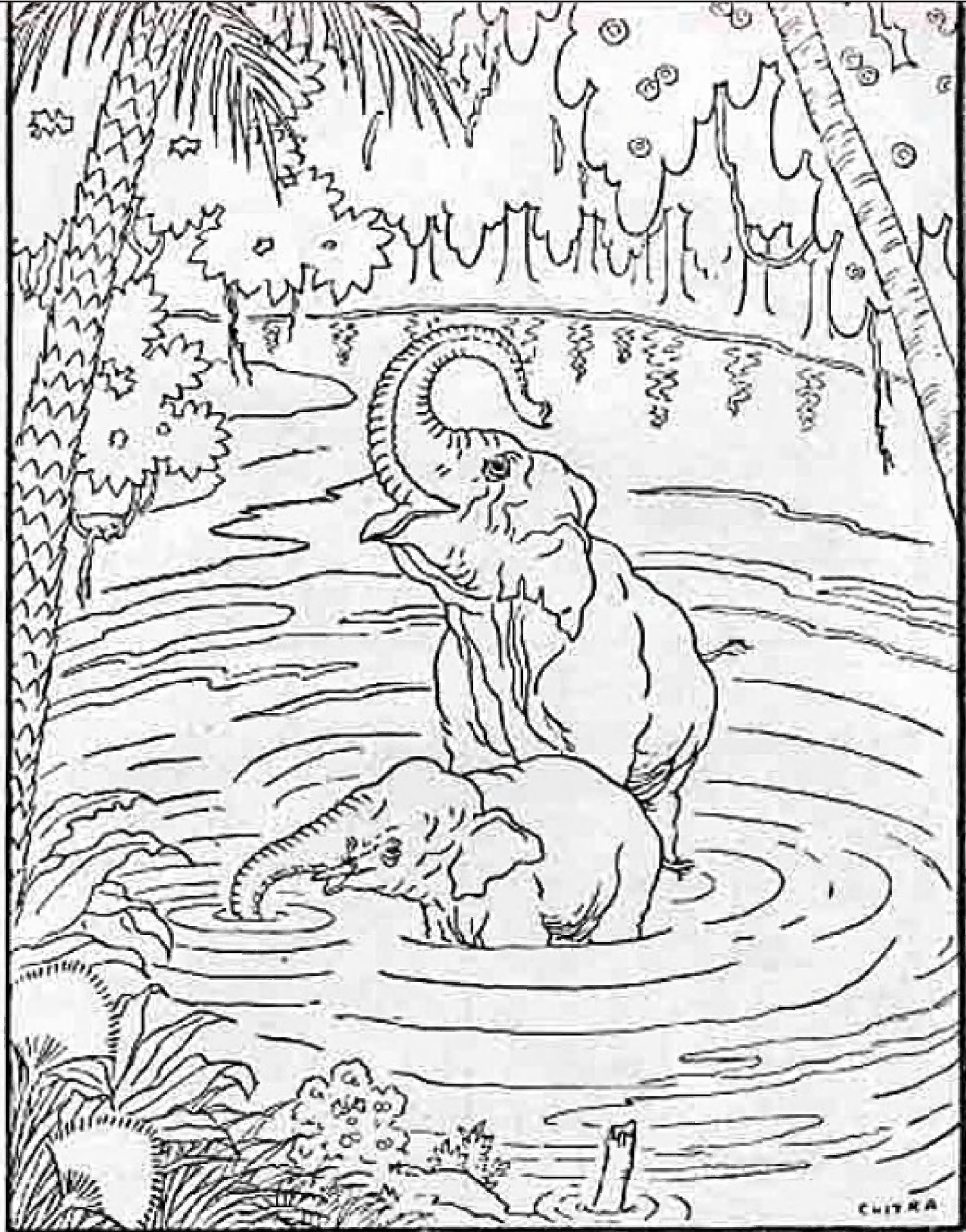
पिछली बार तुम ने जं.मा को रंग लिया होगा। इस बार सोचो कि हाथियों को किन रंगों से रँगना चाहिए। इस तस्वीर को रंग कर अपने पास रख लेना और अगले महीने के चन्दामामा के पिछले कवर पर के चित्र से उसका मिलान करके देख लेना।

Chandamama, March '65 Photo by T. D. Srinivasan, M. A.

कहाँ है दूध ? वह तो कभी का मेरे पेट में चला गया !

CHANDAMAMA (Hindi) March '50 Regd. No. M. 5452

जीब्रा